आज का तेरापन्थ

लेखक

श्री जिनेन्द्रकुमार "भूमर"

×इस पुस्तक का दाम ३) रु० है परन्तु ×

आप श्री ज्ञान मन्दिर के वार्षिक सदस्य बन जाइये। सदस्यता शुल्क १०) रु० देने से हम आपको १५ अगस्त १९५५ तक प्रकाशित होने वाला पूरा साहित्य, पुस्तके, इश्तिहार और अखबारादि घर बैठे भेज देगे। इन सब को अलग २ खरीदने से कम से कम १८) रु० खर्च करने होंगे। पूर्ण विवरण अंतिम पृष्ठों पर देखिये।

प्रकाशकः—
श्री ज्ञान मन्दिर,
नोहर (राजस्थान)

मूल्य ३) रु०

मुद्रकः—
बी. एस. कांथल
नवजीवन प्रेस
बीकानेर।

"उन्हीं आवारों
और नास्तिकों को,
जिनकी, जिन्दा लाशों पर—
तेरापन्थी नेतागण शोहरत के
रंग महल खड़े करना
चाहते हैं ...... ?"

"भूनर"

दिगम्बराचार्य श्री अभिनन्दन सागरजी, क्षुल्लक श्री गणेशप्रसादजी व

संवेगी मुनि श्री वल्लभ विजयजी

आदि सैकड़ों जैन सन्त-सन्यासियों ने कहा था —

अब एक और स्फूर्तिदायक आर्शीवाद

※ स्थानकवासी उपाचार्य श्री मद् गणेशीलालजी महाराज

" .... आज हमारे यहां श्री जिनेन्द्रकुमारजी आये हैं। सम्पन्न और प्रतिष्ठित घराने के इस क्रांतिकारी युवक द्वारा समाज सुधार का काफी काम हो रहा है। ...... इस प्रकार की स्वस्थ हवस प्रत्येक युवक में होनी चाहिये। और......

१५ अगस्त '५४ के प्रात:कालीन प्रवचन से

★ आज का तेरापन्थ ★

(हिन्दी संस्करण)

❀ अंग्रेजी और गुजराती संस्करण प्रेस में हैं । ❀

● युक्ति सङ्गत और तर्कपूर्ण शब्द तो एक छोटे से बालक के भी मान्य हैं परन्तु गलत शब्द साठ वर्ष के बुड्ढे के भी नहीं ।

—तेरापन्थ के संस्थापक श्री भिखणजी

जिनेन्द्र कुमार "भ्रमर"
नोहर (राजस्थान)

★ परम पूज्य आचार्य श्री तुलसी और तेरापन्थी अन्ध-भक्त नेताओं की थोथी किन्तु विनाशकारी धमकियां हमारे परिपक्व विचार नहीं पलट सकेंगी, जैन समाज के सुन्दर भविष्य निर्माण के लिये प्रत्येक युवक-युवती को जुट जाना चाहिये। तभी हम जैन धर्म के असली उसूलों का साधिकार प्रचार कर सकेंगे।

अपने पाठकों से..

जिस समय से मैं तेरापन्थ विषयक लिख रहा हूँ तब से मैं अपने
ालोचकों की वक्र दृष्टि का शि-ार रहा हूँ । आज का तेरा पन्थ
पी इनकलाब का फान है । यह मैं नहीं जानता कि इस रचना को
ाखकर मै हीन बन रहा हूँ अथवा श्रेष्ठ ! किन्तु इतना अवश्य कि
रे विचार, मेरी भावनाएं अब गहरी और आवेग पूर्ण अधिक हो
ई है समाज में उत्तम मनुष्य कहलाना कठिन है और मेरे लिए
ेष्ठ कहलाना लगभग असम्भव सा है । कारण इसके लिए अपना
ला-बुरा सोचना पड़ता है । अपने से अधिक बनना पड़ता है ।
ड़ी बड़ी कमी मुझ मे है । न मैं इसके वास्ते प्रयत्न करता हूँ और न
आकांक्षा है कि जनता मुझे महान् समझे लेखक हू । पत्रकारिता
ावन का महान् उद्देश्य है । गहराई और तर्क के अन्त के साथ ही
लम जोर पकड़ती है और फिर जो लिखता हूँ वह पाठकों के
ामने है ।

मुझ में घमण्ड है । किसी की राय की मैं आवश्यकता नही समझ-
ता । "जिनेन्दु" के सम्पादन काल में, इसी बात से एक बुजुग तेरा

पन्थी सेवक ने लिखा था-"इसी अपनेपन के कारण तुम समाज विशेष कृपा पात्र नहीं बन सके" किन्तु मैं मानता और समझता हूं समाज मेरी तर्कों का अङ्ग है। मेरी तर्कों पर खरा उतरने वाला उत्तम गुण है। इसी प्रकार के अनेक गुणों के संग्रह से जो समा बनेगा वही मेरा समाज होगा।

मै जानता हूँ, मेरे लेखों से, मेरे प्रत्येक शब्दों से, न केवल आचार्य श्री तुलसी को, न केवल तेरापन्थ को और न ही आपको बल्कि स्वयं मुझे दुःख हो रहा है? मेरा दुर्भाग्य है कि तेरापन्थ के बारे में मुझे लिखना पड़ा। परन्तु मैं अपने शब्दों में अपनी आत्मा की सच्ची आवाज पाता हूँ, सुनता हूं। यह मेरा अपनापन है और यही मेरा घमण्ड है। मेरी लेखनी के सम्बन्ध में लोगों को दो शिकायतें विशेषरूप से है। पहली तो यह कि मेरी भाषा साहित्यक नहीं। इस विषय मे आक्षेप करते हुवे मेरे एक मित्र ने लिखा था—
"आपकी चीज से समाज को क्या लाभ होगा, यह मैं देखना चाहता हूँ समाज की कमजोरियों को मिटाने और ताकत को बढ़ाने में आप कहां तक सहायक होंगे। .. ...आपके लेख क्रान्तिकारी और स्फूर्तिदायक है। परन्तु स्वच्छता के उनमें कितने तत्व हैं यह मैं देखने का प्रयत्न कर रहा हूँ।"

खेद है अपने मित्र से मैं असहमत हूं। साहित्य और जीवन को मैं एक समझता हूँ। जीवन मे गहराई है तभी साहित्य का निर्माण

ाता है। साहित्य जीवन को ऊँचा उठाता है और जीवन का उद्देश्य
ी साहित्य को नीचे गिराने का नही । अतः इससे जीवन को, कला
ो, संस्कृति को और सब को ताकत एव स्फूर्ति ही मिलेगी, ऐसा
ेरा विचार है।

साहित्य की भाषा

साहित्य मेरी आत्मा का संगीत है । अगर सङ्गीत अटपटा
और रसहीन होगा तो वह जचेगा नहीं । यही बात साहित्य पर लागू
। फिर मैं साहित्यकार होने का दावा भी नही करता । मुझे तो
अपने विचारों का प्रचार करना है। बिल्कुल सरल और सरस भाषा
लिखने का आदी हूँ।

दूसरी बात है मेरी लेखनी की विशाल उग्रता की मैं बहुत बुरी
रह से तेरापन्थ का विरोध कर रहा हूँ। इस सब ध में मुझे विश्वास
तेरापन्थियों की सहनशीलता या असहनशीलता ही मेरी रक्षा
। यदि स्पष्ट और सच्ची बातें लिखने से तेरापन्थी मेरा
अपमान नहीं करते तो "उग्र" कहकर मेरा अपमान करने का अधि-
ार कहां तक है यह वही जाने । और यदि दोष मेरे पर लगाने
ा उन्होंने निश्चय ही कर लिय है तो भी मैं तैयार हूँ । आज नहीं
ा पांच-सात दिन बाद सही, प्रत्येक समाज-सेवक को यह मानना
डेगा कि तेरापन्थ का विरोध करने का मतलब जैन विशृंखलता से
हीं है । गले-सड़े विचारों, असंयति और अविवेकी साधुवों के व हि-

प्कार के पश्चात ही जैन एकता की नीव दृढ रह सकेगी । ऐसा विश्वास करने का कारण है । यह मेरे लिये शुभ है कि जहाँ केवल नासमझ तेरापन्थी भाई मुझसे चिढ़ते हैं वहां उसी सम्प्रदाय के एक माननीय नेता नेमुझे लिखा— "तुम्हारा ठोस काम देखकर चित्त प्रसन्न हो गया । तुम्हारे दृढ़ निश्चय का मैं सम्मान करता हूं । मुझे विश्वास है कि अपने ही समान नवयुवकों के लिए तुम पथ प्रदर्शक का काम दोगे ।" इत्यादि लिखकर मुझे उत्साहित कर चुके हैं । इस वेग और तुफान को देखकर एक बहुत वडे तेरापन्थी नेता का भी माथा ठनका । उन्होंने लिखा—"तुम लोगों के जो भी जी में आये लिख सकते हो । कलम तुम्हारी है । परन्तु तुम मे गम्भीरता और विवेक लेश-मात्र नहीं है । इस तरह के लेखों से अजैनों के हृदय में हमारी ओर से बुरे विचार वनेगे ।"

एक वुजुग तेरापन्थ सेवक ने भी कुछ इसी प्रकार लिखा— कि पुस्तक छपने से आचाय श्री को दिखाओ । तेरापन्थी साधु-सन्तों की राय लो । गुरू पर श्रद्धा रखो ।" लेकिन यह सब थोथी बातें हैं । मेरी किसी गुरु और सम्प्रदाय विशेप में श्रद्धा नहीं है । सारा जमाना मेरा गुरु है और जमाने का मैं ।

एक समय आचार्य श्री तुलसीजी ने कहा था— "साधु सम्प्रदाय मे बुराइयों को दूर करने के लिए ही मैं हूॅ । सच्चे जैनी का यही कर्त्तव्य है वह मुझ पर श्रद्धा रखे और जनता में ऐसी भावनाऍ न

फैलायें। निसन्देह आचार्य श्री ठीक ही फरमाते होंगे। कारण मेरा अब भी कुछ मोह बाकी है। आखिर जाने-अनजाने में २० वर्ष गुरुजी रह चुके है। और शायद आज भी मैं आचार्य श्री पर पूर्ण आस्था रखता अगर आचार्य श्री मेरे लिखे शब्दों से अनभिज्ञ होते। या उन्हें पता नहीं होता कि अमुक साधु-सतिया साधुत्व के योग्य नहीं हैं। परन्तु जैसा मुझे विश्वास है आचार्य श्री इन सब को जानते हैं। फिर भी मुझे आचार्य श्री तुलसी पर घमण्ड है। मुझे आचार्य श्री पर पूर्ण आस्था होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। कारण श्री तुलसीजी बहुत समझदार और योग्य पुरुष हैं। अगर जैन शास्त्रों और सुत्रों का तुलसीजी से सम्बन्ध निकाल दिया जाय तो वास्तव में "मेरे तुलसी" सा योग्य कार्य-कर्ता भारत में नहीं है।

मुझे यह भी भरोसा है—एक समय तुलसीजी स्वयं "तेरापन्थ" के पचड़े से निकल कर, बिना किसी बन्धन के, बिलकुल आजाद रूप से देश सेवा करेंगे। और यह निस्वार्थ सेवा ही आत्म कल्याण का मार्ग प्रदर्शन करेगी।

खैर: मैं अपने लिखे तौर-तरीकों में परिवर्तन चाहता हूँ। मुझे विश्वास हो गया है इन्हें समाप्त करने के लिये अपना समय खर्च करना होगा।

चार-पांच सो पाठको के आग्रह भरे पत्र आने तक जिस पुस्तक को लिखने को कलम भी नहीं उठाई थी वह केवल ६-७ दिन मे लिख

चुका । यही नही जब तक तेरा-पन्थी अपने मे परिवर्तन नहीं करेंगे, मैं हर प्रकार के लेख, विज्ञापन, पुस्तकें जीवन प्रयत्न लिखता रहूँगा ।

अन्त में अपने पाठकों को यह विश्वास दिलाते हुवे कि मुझे भी तेरा पन्थ और जैन धर्म से उतना ही प्रेम है जितना उन्हें, इस अप्रिय चर्चा को यही समाप्त करता हूं । इस पुस्तक को लिखने मे जिन सहयोगियों ने अपनी पूर्ण कृपा प्रदान की है, उन्हे हार्दिक धन्यवाद ।

जि० कु० "भ्रमर"

नोहर (राजस्थान)
स्वतन्त्रा-दिवस १९५४ ई०

खण्ड पहला

आज का तेरा-पन्थ

एक परिचय

आज का तेरा-पन्थ

(१)

श्री भीखणजी, जो तेरा पन्थ के संस्थापक थे, का स्वर्गवास हुवे आज लगभग दो सौ वर्ष हो गये हैं। मृतात्मा के बारे में अधिक न लिखकर इतना लिख देना काफी है कि गहरे असन्तोष एवं अविवेक के कारण से ही इन्होंने तेरापन्थ की स्थापना की थी। तेरापन्थ के धार्मिक और सामाजिक दृष्टिकोण के बारे में तो हम "आज के तेरा पन्थ" के दूसरे भाग में लिखेंगे। लेकिन श्री भीखणजी ने जैन सम्प्रदाय के स्थानकवासी संघ मे दिक्षा ली थी। और अपने आपको अधिक बुद्धिमान और अपने कार्यो को शास्त्रानुकूल समझने के कारण, स्थानकवासी आचार्य रुघनाथजी से इनकी कभी नहीं पटती थी। .... अन्त में इन्हे स्थानकवासी सम्प्रदाय को इस्तिफा देना पड़ा।

भीखणजी के साथ इनके हिमायती कई और साधु भी बहिष्कृत किये गये। कुल तेरह साधु होने के कारण इन्होंने अपने नये संघ का नाम 'तेरह-पन्थ" रखा। इसी तेरह पन्थ का बिगड़ा हुआ रूप "तेरा पन्थ" है।

जैन धर्म को तोड़-मरोड़ कर इन्होंने अपना एक नया कार्यक्रम बनाया। नये शास्त्र बनाये। नये उद्देश्य बनाये। परन्तु तेरापन्थ के किसी भी कार्य में जैनत्व की छाप नही है ? इसके बारे में हम अधिक नहीं लिखेंगे। पाठक स्वयं सोचें कि तेरापन्थी जैनी हैं अथवा नहीं ? परन्तु तेरापन्थी बार २ जैन शास्त्रों एवं सूत्रों की दुहाई देते हैं। अतः इन्हें जैनी कहना उचित ही है।

जैन श्वेताम्बर तेरापन्थ के भीखणजी के पश्चात् सात और सत्ताधीष हो चुके हैं। इन्होंने अपने जीवन में ऐसा कोई विशेष जन हित और लोक मंगल का कार्य नहीं किया है कि उनका जिक्र किया जावे। हां ! अपने अन्ध भक्तों को और अधिक ठगने के लिये इस बीच में कुछ नये २ नियम जरूर बने थे। इस समय तेरापन्थ के आचार्य, श्री तुलसीरामजी महाराज हैं।

श्री तुलसीजी अपने गृहस्थकाल में कैसे रहे हैं, इसके बारे में भी न जानने के कारण लिखना युक्ति-संगत नहीं होगा। परन्तु तुलसीजी के एक निकटतम मित्र ने जो बताया, उसे हुबहु लिख रहे हैं।

> "तुलसीजी का एक मध्यम श्रेणी के ओसवाल जैन परिवार में जन्म हुवा था। अर्थ व्यवस्था ठीक न होने के कारण अधिक न पढ सके।...... भाई बहिनों में रोजाना लड़ाइयां होती थी। ...... बहुत तंग हालत थी। कर्ज

देने वालों ने कर्ज देना बन्द कर दिया। पास-पड़ौसी घर में घुसने नहीं देते थे। आखिर कहां तक दुःख झेले जाएँ। साधु बनने से भर पेट खाना तो मिल ही सकता है। फिर ये साधुवों के पास बहुत आते-जाते थे। अन्त में तेरापन्थी साधु बनना ही उत्तम समझा।"

और आज हमारे तुलसी न केवल तेरापन्थ के नवें आचार्य हैं अपितु सैकड़ों अन्ध भक्तों को अपने चुंगुल में फँसा रखा है। इन लोगों से जैसा चाहते हैं, व्यवहार करते हैं।

तेरा-पंथ के अटल उद्देश्य

और

तुलसीजी की नादिरशाही

(१)

अपनी छोटी सी ग्यारह वर्ष की उम्र में श्री तुलसीजी ने तेरापन्थ में दिक्षा ली। जब आप बाइस वर्ष के हुवे, तेरापन्थ के आठवें सत्ताधिकारी श्री कालूरामजी ने इस संसार असार से पलायन करते समय आपको अपना प्रतिनिधि बनाया। उनकी मृत्यु के पश्चात् आप पूरे आचार्य यानि तेरापन्थ के सर्व-सर्वा बन गये।

मेरा लिखने का यह मतलब नहीं कि आप आचार्य होने के काबिल नहीं हैं ? या आप कम पढ़े लिखे हैं ? जितनी शिक्षा की जैन साधुवों को आवश्यकता रहती है, उससे कहीं अधिक आप में है। इस कसौटी पर खरे उतरने के कारणों से ही आपको श्री कालूरामजी ने आचार्य की पदवी दी थी और हम भी इसका समर्थन करते हैं।

तेरापन्थ के सिद्धान्त बनाते समय श्री भीखणजी ने अपने विवेक से काम नहीं लिया। जब चारों ओर से अपमानित एव निरस्कृत होकर आपको स्थानकवासी सम्प्रदाय से जबरदस्ती निकाला गया तो अस्थत मस्तिष्क आत्म कल्याण से अधिक "बदले की भावना" की ओर जल्दी आकर्षित हुवा। उस समय बागड़ी ओसवालों का क्षेत्र बीकानेर डिवीजन इनके वास्ते बिल्कुल सूना था। इस क्षेत्र मे गर्मी में अधिक गर्मी और सर्दी मे अधिक सर्दी पड़ती है। बागड़ी कन्जूस भी अधिक होते थे अतः साधुवों को खाना-पीना भी ढंग से नहीं मिलता था। साधुवों के सब प्रकार की अव्यवस्था थी। यहां तक की बागड़ी मन्दिर में दर्शनार्थ जाते थे। परन्तु पैसा और चावल आदि चढ़ा कर कभी पूजा नहीं की जाती थी। धार्मिक उत्सवों में भी एक पैसा व्यय नहीं किया जाता था। अतः साधुवों ने इस क्षेत्र मे आना छोड़ दिया। हमारे साधु भाई बागड़ियों से बहुत रुष्ट हो चुके थे, अतः बार २ विनती करने के बाद भी इस ओर आने का नाम नहीं लिया।

भिखणजी आदि सन्तों को मारवाड़ से खदेड़ा गया। जैन शास्त्रों एवं श्री रुघनाथजी के बारे में अनर्गल बकने के कारण उस समय के जैनी इन्हें रोटी के लिए भी नहीं पूछते थे। अन्त में इस क्षेत्र में पधार गये। पूर्व जन्म के पुन्यफल के उदय से यहां इनका मन्त्र सही उतरा। यहां के लोगों की इच्छानुसार तेरापन्थ के उद्देश्य

बनाये गये।

यहां के लोगों की कन्जूसी को देखते हुए एक नियम बनाया गया पैसा खरचने में पाप है। चाहे पैसा मन्दिर के निर्माण के लिये लगाया जावे या किसी अपंग, गरीब को धर्मार्थ दिया जावे ?

दूसरा नियम बनाया गया— पैसों से मोक्ष नहीं मिलेगा । जो साधु या धर्म पैसों से जन-सेवा या आत्म-कल्याण कहते हैं, वे सब ढोंगी हैं।

इसके अलावा जैसे २ लोग मिले वैसे २ नियम बनाये गये । इनमे जैन शास्त्रों का कहीं भी और थोड़ा भी अंश नहीं है।

पैसा लगे न टका ।
तेरा-पन्थ सच्चा ।

यह पुरानी कहावत बिल्कुल सच्ची है । तेरापन्थ को सफलता मिली । इनके काफी मानने वाले भी हो गये । अपने अन्ध भक्तों के मन में स्थायी श्रद्धा रखने वास्ते इन्होंने कैसे २ नियम बनाये है । इन सबका हम जिक्र करना आवश्यक समझते है ।

तेरा-पन्थी और दया-दान

(३)

"साधु थी अनेरा तो कुपात्त छः" कुपात्र दान-मांसादि सेवन, व्यसन, कुशीलादिक ये तीनों एक ही मार्ग के पथिक हैं । जैसे कि चोर-जार-ठग ये तीनों एक समान व्यवसायी हैं ।

(भ्रम-वि०, पृष्ठ ७६)

अब देखिये इस तेरापन्थी उपदेश एवं जैन धर्म के उपदेश मे कितना मत-भेद है । बेशक आप बारह व्रतधारी श्रावक हों, बेशक आप उन सब नियमों को अपने जीवन में उतार चुके है जो एक साधु पालता है या बेशक आप का मन शुद्ध है रोजाना धर्मानुसार काम करते हों ? परन्तु आपको दिया गया दान कुपात्र दान है । और देने वाले को उतना ही पाप लगेगा जितना मॉस खाने से, ठगी करने से, बदमाशी और पर-स्त्री गमन से लगता हो । इस महा उपदेश को सुनकर हमारे तेरापन्थी क्या किसी को दान देने का संकल्प करेंगे ? अब प्रश्न उठता है सच्चा साधू कौन है ? सुपात्र दान का अधिकारी

कौन है ? किसको दान दिया जावे कि देने वाले को सीधा मोक्ष मिले ?

"तेरापन्थ से प्रवर्तत गुरु जावणा" इस लड़ी से स्पष्ट ज्ञान हो जाता है—तेरापन्थी साधू के अलावा ससार के सब महात्मा असाधु है। यदि संसार मे साधू हैं तो केवल तेरापन्थी। तेरापन्थ के साधुवों को दिया गया सुपात्र दान है। भले ही तेरापन्थी साधू दिन-रात देश की बहु-बेटियों की ओर आखें तरेरे रहे। भले ही तेरापथी साधू चोविसों घन्टे लड़ते-झगड़ते रहें? भले ही तेरापन्थी साधू पाचों महाव्रतो को साधू बनते ही निलाम कर दिया हो? पर तेरापन्थी साधू संयमी हैं, सच्चे है। और सब झूठे? तेरापन्थियों को दान देने से सीधा स्वर्ग मिलेगा। और अगर भूल से ही किसी अन्य साधू को दान दे दिया तो उतना पाप लगेगा जितना पर-स्त्री गमन से, मांस खाने से, चोरी और रण्डीबाजी करने से? भाइयो! अगर आपको आत्म-कल्याण कर मोक्ष जाना है तो स्थानकवासी साधुवों को रोटी मत दो? संवेगियों को रोटी मत दो। यह कुपात्र दान है? और दिगम्बरियो को दान देना तो एकान्त पाप है?

यह तो हमारे जैन साधुवों को दान देने के लिए आदेश है। साधुवाद यहीं समाप्त नहीं हो जाता है। भगवे कपडे पहने हम प्रतिदिन दसों साधू देखते है। सड़क पर चिल्ला २ कर लूले-लगड़े रोटी के टुकडे मागते फिरते है, उन्हें भी तो साधू ही कहा जाता है।

यही नही ऐसे मनुष्यों को भी तो कमी नहीं जो तेरापन्थी मोड़े-मस-
टन्डो से बहुत ऊँचे है ? परन्तु इन सबको दान देना .... ।

कितनी सकीर्णता है । तेरापन्थी साधुवों ने यह नियम इस वास्ते बनाया कि उनके अन्ध भक्त श्रावक दूसरे साधुवो को नमस्कार वन्दन करना तो अलग रोटी का टुकड़ा तक न दे ।

जहां हम तेरापन्थ संस्थापन का विरोध एवं इसके लिये वनाये गये अनुशासन के नियमों की कद्र करते हैं । वहां जैन सम्वन्ध विच्छेद का असमर्थन भी। एक वात और ! अपने समय की दृष्टि से शायद भीखणजी ने अपने कार्य-क्रमों को उचित समझा होगा । परन्तु आजके लिये वे हानिकारक है । अत: मैं जो भी लिख रहा हूं, आज के समय को देख, समझ कर । इसमें श्री भीखणजी के मान-अपमान की वात नही है। हां तुलसीजी के लिए गर्व या हीनता का विषय हो सकता है।

श्री भीखणजी एक जबरदस्त शासक

(४)

हमने श्री भीखणजी के बारे में अधिक नहीं लिखा है । अगर
जैन शास्त्र और आपके असन्तोषित मस्तिष्क द्वारा निर्मित तेरापन्थ
को आपसे अलग कर दिया तो आप प्राचीन वाङ्मय के सुन्दर प्रका-
शमान रत्नों में से एक हैं । यह हमें भी मानना पड़ेगा । परन्तु दिन
रात "भीखण" "भीखण" चीखने-चिल्लाने वाले और लाठी के जोर से
जैन समाज को पतन के बाड़े मे बन्द रखने के लिये आतुर नामधारी
तेरापन्थी नेता हमे इसका अवसर ही नहीं देते कि श्री भीखणजी के
अनेक ऐसे सिद्धान्तों का प्रचार किया जावे जिनका अनुकरण हमें
आज भी जीवन को सफल बनाने मे सहायता दे सकता है । यही नहीं
श्री भीखणजी का व्यक्तित्व अत्यन्त ही आकर्षक और प्रभावशाली
था । अपने युग की दृष्टि से, अनेक क्रान्तिकारियों मे आपका नाम
आता है । स्थानकवासी समाज के [illegible] में आप बहुत बड़े
सहायक रहे है । हमारे मन मे आपके प्रति अत्यन्त श्रद्धा एव
सम्मान है ।

श्री भीखणजी एक जबरदस्त शासक

(४)

हमने श्री भीखणजी के बारे में अधिक नहीं लिखा है । अगर जैन शास्त्र और आपके असन्तोषित मस्तिष्क द्वारा निर्मित तेरापन्थ को आपसे अलग कर दिया तो आप प्राचीन वाङ्मय के सुन्दर प्रकाशमान रत्नों में से एक है । यह हमें भी मानना पड़ेगा । परन्तु दिन रात "भीखण" "भीखण" चीखने-चिल्लाने वाले और लाठी के जोर से जैन समाज को पतन के बाड़े मे बन्द रखने के लिये आतुर नामधारी तेरापन्थी नेता हमे इसका अवसर ही नहीं देते कि श्री भीखणजी के अनेक ऐसे सिद्धान्तों का प्रचार किया जावे जिनका अनुकरण हमे आज भी जीवन को सफल बनाने में सहायता दे सकता है । यही नहीं श्री भीखणजी का व्यक्तित्व अत्यन्त ही आकर्षक और प्रभावशाली था । अपने युग की दृष्टि से, अनेक क्रान्तिकारियों मे आपका नाम आता है । स्थानकवासी समाज के पुनर्निर्माण में आप बहुत बड़े सहायक रहे है । हमारे मन में आपके प्रति अत्यन्त श्रद्धा एव सम्मान है ।

से वाहर घूमती-फिरती है उसकी इस समाज में बहुत आलोचना होती है ।

परन्तु साधु सन्तों के यहां जाने की इन्हें बिल्कुल छूट है। कुछ साधुत्व का पहनावा ही ऐसा होता है कि "वेश से हमे श्रद्धा हो ही जाती है।" तेरापन्थी सतियों से महिलाए विशेप रूप से प्रभावित हैं। प्रत्येक महिला पुरुष को लगभग यह नियम मानना पड़ता है कि प्रतिदिन प्रातःकाल खाना खाने से पहले सावु-सतियों के दर्शन करें । सोगन्ध तोड़ने से महापाप होता है । अतः सुवह २ सब तेरापन्थी श्रद्धालु स्थानक में नजर आते है ।

तेरापन्थी साधुवों की यह भी एक विशेपना है कि सव श्रावकों की गिनती रखते है । अमुक आया या नहीं, इसका विशेष रूप से ख्याल रखा जाता है। जो नहीं आता उसके घर जाकर, पुनः सोगन्ध दिला आते हैं या इस प्रकार उसे अपमानित कर देते हैं कि दूसरे दिन से उसे आना ही पड़ता है।

युवक ज्यादातर तेरापन्थ से विद्रोह करने लगे हैं । इन्हें तेरापन्थी आडम्बर पस द नहीं है। तेरापन्थी साधु अपने दर्शन करने का सोगन्ध दिलाने का जव युवकों से आग्रह करते हैं तो उनके दिलों मे एक शंका जाग जाती है-महाराज में ऐसे, कैसे और कितने गुण हैं कि प्रातःकाल इनका दर्शन करना विल्कुल आवश्यक हैं ? और कई वातों में महात्मा से अधिक अपने को स्वस्थ एवं सुन्दर पाते है ।

तेरापन्थ एक परिवार है !

(६)

तेरापन्थ के लगभग ६०० साधु–साध्वियां और अन्दाजन ८०–९० हजार श्रावक सब एक ही परिवार के हैं। इनका आपस मे इतना गूढ सम्बन्ध है कि अलग नहीं हो सकते।

शत–प्रतिशत ऐसे तेरा-पन्थी श्रद्धालु मिलेंगे, जिनका मामा, काका, काकी, मामी, मासी या भुवा तेरापन्थ साधु समाज में है। इस रिश्तेदारी के कारण श्रावकों को तेरापन्थी साधुवों के यहां जाना पडता है और छोडने पर ये लोग नाराज हो जाते है। कुछ ऐसी ही और भी प्रस्थितियां है जिनके कारण तेरापन्थी श्रावक यकायक तेरा–पन्थ को छोड़ नहीं सकते।

स्त्रियों में धर्म के प्रति अधिक मोह होता है फिर इस सम्प्रदाय को मानने वाली ज्यादातर ओसवाल औरतें हैं। साधु–सम्प्रदाय मे भी साध्वियां अधिक हैं। ओसवालिन महिलाएं ज्यादातर घर से बाहर नहीं निकलती। ऐसी एक सामाजिक मर्यादा है। जो औरत घर

से बाहर घूमती-फिरती है उसकी इस समाज में बहुत आलोचना होती है ।

परन्तु साधु सन्तों के यहां जाने की इन्हे बिल्कुल छूट है । कुछ साधुत्व का पहनावा ही ऐसा होता है कि "वेश से हमें श्रद्धा हो ही जाती है ।" तेरापन्थी सतियों से महिलाएं विशेष रूप से प्रभावित हैं । प्रत्येक महिला पुरुष को लगभग यह नियम मानना पड़ता है कि प्रतिदिन प्रातःकाल खाना खाने से पहले साधु-सतियों के दर्शन करें । सोगन्ध तोड़ने से महापाप होता है । अतः सुबह २ सब तेरापन्थी श्रद्धालु स्थानक में नजर आते हैं ।

तेरापन्थी साधुवों की यह भी एक विशेषता है कि सब श्रावकों की गिनती रखते हैं । अमुक आया या नहीं, इसका विशेष रूप से ख्याल रखा जाता है । जो नहीं आता उसके घर जाकर, पुन. सोगन्ध दिला आते हैं या इस प्रकार उसे अपमानित कर देते हैं कि दूसरे दिन से उसे आना ही पड़ता है ।

युवक ज्यादातर तेरापन्थ से विद्रोह करने लगे हैं । इन्हें तेरापन्थी आडम्बर पसन्द नहीं है । तेरापन्थी साधु अपने दर्शन करने का सोगन्ध दिलाने का जब युवकों से आग्रह करते हैं तो उनके दिलो में एक शंका जाग जाती है—महाराज में ऐसे, कैसे और कितने गुण हैं कि प्रातःकाल इनका दर्शन करना बिल्कुल आवश्यक हैं ? और कई बातों में महात्मा से अधिक अपने को स्वस्थ एवं सुन्दर पाते हैं ।

केवल भेष लेने से तो साधु नहीं कहलाया जा सकता ?

ऐसे युवकों के माता-पिताओं को यह नियम दिलाया जाता है कि जब तक उनका लड़का दर्शन न करे तुम स्वय खाना न खाओ और लड़के को भोजन न दो। हमारी मां-बहिने इस महावीर वाणी के आगे झुक जाती है और सोगन्ध ले लेती हैं। कई भावुक युवक, जिनका अपनी माताओं से विशेष प्रेम होता है, म ताजी के आग्रह से और दिन उगते ही पचासों बार कहने से, यह बला टाल देते है। परन्तु कई ऐसे युवक भी हैं जो इसका शानदार उत्तर भी दे सकते हैं।

दूसरा प्रयोग

(६)

जो तेरापन्थी मां—ब प का लड़का साधुवों के प्रति श्रद्धा नही रखता, उसे तेरापन्थी साधु बिल्कुल आवारा और बदमाश समझते हैं। यही नही उसके बारे में अनर्गल प्रचार किया जाता है ।

अगर उस युवक की वहिन शादी योग्य हो तो इससे बड़ा शस्त्र तेरापन्थी साधुवों को दूसरा नहीं मिलेगा । तेरापन्थ समाज मे शादी करने से पहले साधुओं की राय अवश्य ली जाती है कि अमुक घराना कैसा है और लड़की या लड़का कैसा है ?

इस महान शस्त्र के वल से जो चाहे हमारे "महा" मुनि जी कर सकते हैं । किसी को भले-वुरे का प्रमाण पत्र देना इनका अपना अधिकार है ।

लड़की के व्याह में हमें अपार कष्ट उठाने पड़ते हैं । लेकिन अगर आप इन साधुवों के कृपा पात्र हैं तो अपनी समस्या रख दीजिये । दिन-रात इनकी जी हजुरी करने वाले युवक-युवतियों के

प्रशंसा पत्र इनके पास हैं । और मामला बारह आना आप पटा दीजिये अगर ये चाहेंगे तो इसे पूरा सोलह आना बना डालेंगे अथवा बिल्कुल खतम ।

यह एक ऐसी स्कीम है कि कोई भी तेरापन्थी न तेरापन्थ को छोड़ सकता है और न छोड़ कर अलग ही रह सकता है ।

कैसे हैं ये साधू !

(७)

वास्तव में ही आज के तेरापन्थी साधु-सतियां समाज के लिए अभिशाप है । ये "जैनत्व" से कोसों दूर है । पतन के गड्ढे में पडे हुवे है और दिनों दिन गरत में गिर रहे हैं

आचार्य तुलसी इस समय का नाजयाज लाभ उठाना चाहते है । आज का व्यक्ति आजाद है और उसके विचार बिल्कुल स्वतन्त्र ! तेरापन्थ साधुवों के लिए भी यही बात लागू हैं ! परन्तु तुलसी जी पूर्ण तानाशाही चला रहे हैं । अपने को स्टालिन और हिटलर से कम नहीं समझते । और मैं तो आपको दूसरा नादिरशाह समझता हूं ।

एक समय राजा महाराजा हम पर राज करते थे ! उन्हें किसी प्रकार निकाला गया तो ये साधू लोग साधुत्व के नाम पर हमारा गला घोंटने लगे । उन राजाओं और हमारे आचार्यों में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है ।

श्री तुलसीजी तो औरङ्गजेब हैं ? जिस तरह औरङ्गजेब में लूट-

खसोट, चोरी और बदमाशी की भावनाएं थी, वे तुलसी जी में भी हैं । औरंगजेब और तुलसी जी में अगर फर्क है तो इतना कि एक जमाने के सामने रंगरेलियां मचाता था और दूसरा लुक-छिप और धोखा देकर, जनता की आखों में धूल झोंक कर ।

जहां औरंगजेब अपने लिये नगी औरतों की फौजे रखता था, वहां तुलसी जी के पास सतिया हैं । आहार-पानी और कपडे-लत्ते आदि सम्भालने रखने की व्यवस्थाएं तुलसी जी की "जैन तेरापन्थी सतियां" नामक महादेवियां ही करती हैं । एकान्त मे सत्तियो के हाथों से परोसे भोजन को खाने वाले तुलसी जी हमारे वास्ते एक समस्या है ? हम इन्हे क्या समझे और कैसा समझे ?

मकरध्वज और शीलाजीत का न केवल श्री तुलसी जी सेवन करते हैं, अपितु सैकड़ों तेरापन्थी साधु-सतियां भी कामोत्तेजक और बल-वर्धक औषधियों का सेवन करते हैं ? पर क्यों और किस ध्येय की पूर्ति के लिए ?

साधुओं की चरित्र-हीनतता का प्रधान कारण तरमाल और सुस्वादु भोजन के अलावा शृंगारिक रहन-सहन की कामना । यही ... है गृहस्थों से अधिक बीमारियां साधुवों के मिलेगी । जिनमें ... और 'अपच' की बीमारियां मुख्य हैं ।

आज के तेरापन्थी साधू

(८)

आज के तेरापन्थी साधु —मानवता के नाम पर कलंक हैं। सुबह उठते ही अपनी रंग-रंगीली पात्रियां लेकर श्रावकों के चक्कर लगाना आरम्भ कर देते है। सन्ध्या को चार-पांच बजे तक यही कार्य क्रम चलता है। खान पान की इतनी लोलुपता, स्वादिष्ट और चटपटे भोजन के अलावा आहार पाना पसन्द नहीं करते। लगभग सारी पात्रियां मधुर, रसीले पकवानों और अचार-मुरब्बों से भरी मिलेंगी। जन श्रावकों के यहां साधारण भोजन बनता हो, उनके यहां जाकर अपना समय खराब नहीं करते। और जो इनकी इच्छानुकूल भोजन दे देता है उसकी आप लोग बहुत प्रशंसा करते हैं।

यही नहीं, अपनी पसन्द का भोजन भी ये लोग बडे शानदार तरीके से बनवा लेते है। पांच-सात श्रावकों के बीच ये लोग पूछते है—"अमुक खाना आज से दो वर्ष पूर्व अमुक श्रावक के यहां मिला था।" बस यह इशारा समझने वालों के लिये काफी होता है। और जब महाराज "गथाचरी" के लिये पधारते हैं तो हर जगह वह

खाना तैयार मिलेगा ।

खाने-पीने और ऐश आराम करने के अलावा तेरापन्थी साधुओं का दूसरा धन्धा नही हैं । हां ! अपने श्रावकों के अटूट गठ-बन्धन को स्थायी रखने के लिए सुबह २ एकाध घन्टा व्याखान जरूर होता है। परन्तु सुरैया और जैश्री के फिल्मी गानों की तर्जों के कुछ रटे-रटाये धार्मिक टोटके सुनाने और अभिनेताओं से हाव-भाव करने के अलावा इनके पास और कोई ज्ञान नहीं है ?

तेरापंथी कवि

(९)

"ओ ! तुलसी चले नहीं जाना"

"जावोगे जाने न दूंगी, मैं रस्ता रोक लूंगी"

"भीखणजी ने नैया पार लगाई ।"

इत्यादि अनेक शृंगारिक शैली के और फिल्मी गीतों की तर्जों पर हमारे तेरापन्थी साधू कुछ टोटके बनाकर, अपने आप ही महा कवि की उपाधि ले लेते हैं। इन गीतों की छोटी २ पुस्तिकाएँ छपवा कर मुफ्त वितरित की जाती हैं। छोटे २ बच्चे-बच्चियां और महिलायें इन गीतों को विशेष पसन्द करते हैं।

परन्तु यह महा कवित्व ही तेरापन्थी साधूवों का सबसे बड़ा दोष है। इसी की छत्र-छाया में बड़े २ और भयंकर काम हो रहे हैं। ये पाप अधिक दिन तुलसीजी के लोह-आवरण में छिपे नहीं रह सकते और जब पर्दा-फाश हो जाता है तो...... ।

एकान्त सेवा

(१०)

एकान्त सेवा के नाम पर अनेक प्रकार का अत्याचार तेरा-पन्थी साधु कर रहे हैं। इनका इतना साहस हो गया है कि अकेली महिला को देखते ही एकान्त सेवा करने की सूचना दे देते हैं। कुछ महिलायें तो अनेक वार एकान्त सेवा का लाभ उठा चुकी होती हैं और जो बेचारी नहीं जानती वह साधुजी के चंगुल मे फंस जाती है।

जहां भीखण जी ने नारी से दूर रहने के लिए अनेक प्रकार के नियम बनाये थे वहाँ आज के तेरापन्थी साधु अपना ज्यादातर समय छैलेपन और नारी के साथ बिताने में विशेष उत्सुक हैं। स्त्रियों को एकान्त सेवा का लाभ बताकर "रास्ते की सेवा" के लिए भी तैयार किया जाता है। उनसे घर-गृहस्थी की बातें पूछी जाती हैं। रात को उसका पति उसके साथ क्या करता है ? आदि हर तरह की बातें पूछ कर भोली-भाली महिला को फुसला लेते हैं। पचासों तरह के कांड हम देख और सुन चुके हैं। ऐसे पचासों साधु-सतियों को भी हम जानते हैं जिनका पर्दाफाश अत्यन्त शानदार ढंग से हुवा। ऐसे लोग समाज के लिए अभिशाप हैं। श्री भीखण जी के नाम को बट्टा लगा

रहे हैं। परन्तु तुलसी जी ऐसे साधुओं से विशेष रूप से प्रेम करते है। कारण, पुत्र जो हैं!

हां, सुपुत्र! तेरापन्थी साधुओं को आचार्य श्री अपने लड़के समझते हैं और अगर उनसे किसी "पुत्र जी" की शिकायत की जावे तो कहते है "अगर किसी के नालायक लड़का हो जावे तो उसे निकाला नहीं जाता!"

इस प्रकार का यह पुत्र और पिता का सम्बन्ध हमने केवल तेरापन्थ में देखा है।

सतियां भी कम नहीं

(११)

अपने को किसी भी फिल्म एक्टरेस से कम न समझने वाली महादेवियां भी तेरापन्थ में हैं। जाने-अनजाने में दिक्षा लेकर आज वे समाज के वातावरण को कुत्सित कर रही है। शारीरिक सौन्दर्य बढ़ाने की इतनी लिप्सा रहती है कि अफगान स्नो और पोन्डस् क्रीम किसी बहाने ले जाने की इन्हें बहुत फिकर रहती है। वेसलीन तैल आदि तो प्रत्यक्ष चलते है।

साधुओं को तो फिर भी जैन शास्त्रों एवं सुत्रों का थोड़ा बहुत ज्ञान होता है। लेकिन हमारी सतियां जी तो बिल्कुल कोरी हैं। दिन भर महीन और फड़-फड़ाते कपड़ों को पहन कर सड़कों की रेत बुहारना। तंग कपड़े पहन कर अप ने ·· ·का विज्ञापन करना, बस यही जीवनचर्या है सतियों की। ये क्या तो स्वयं अपना कल्याण करेंगी और क्या जनता का।

अपने जीवन के अमूल्य क्षणों का इस तरह सर्वनाश करने वाली सतियों जी के बारे मे बहुत कुछ लिखा जा सकता है। आचार्य श्री तुलसी की दृष्टि में इनकी केवल इतनी ही कद्र है कि "नौकरों"

की समस्या हल हो गई । संघ की समूची व्यवस्था और काम-धन्धे सतियों जी को करने होते हैं ।

तेरापन्थी सन्तों-मस डों को तो "एकान्त सेवा" कराने से भी फुरसत नहीं । शहर से भिक्षा लाना तो सतियो का ही काम हैं । यही नहीं साधुओं के मैले कपड़े अत्यन्त श्रद्धा से हमारी सतियां जी ले लेती है । और अपने नये वस्त्र साधुओं को दे देने मे गर्व समझती है । इतना सब कुछ करने पर भी "महा-मुनि" जी की दृष्टि में सतियां केवल "भारतीय नारी हैं ।" इनका किसी भी प्रकार से उपयोग किया जा सकता है । श्रद्धा और स्नेह की पुतलियां, महा सतियां जी महाराज नैन बाणो की प्रशंसा करने वाले दो-चार सन्त भी मै जानता हूँ ।

हाय, भिखणजी !

(१२)

तेरापन्थी साधुओं और तुलसी जी के विनाशक कार्य कर्मों को देखकर स्वत ही श्री भिखण जी की याद आजाती है। मोह और सम्मान से ज्यादा गुस्सा आता है। श्री भिखण जी को तो केवल अपनी आत्मा का सुधार करना था। अच्छा होता अगर हमारी फिकर आप नहीं करते! अगर आज श्री भिखण जी स्वयं इन तेरापन्थी कुकर्मो को देखते तो घन्टों रोते और तेरापन्थ स्थापना का प्रायश्चित करते। श्री भिखण जी को स्थानक वासी सम्प्रदाय से अवश्य ईर्ष्या थी। लेकिन उन्होंने कभी यह नहीं सोचा था कि एक दिन तेरापन्थ इतना वढ़ जावेगा और तेरापन्थ की सत्ता ऐसे दानवों के हाथ में आजावेगी कि जिनेन्द्रकुमार से हजारों युवकों को तेरापन्थ का विरोध करना पड़ेगा। जिस तेरापन्थ की हमारे मित्रों और परिवार जनों में गहरी इज्जत है उसी तेरापन्थ के आज के सिद्धान्तों के कारण मैं इससे न केवल अलग हूं अपितु अगर मेरा वश चले तो इस विनाशकारी तुलसी-पन्थ पर जल्दी से जल्दी विना मुकदमें चलाये प्रतिवन्ध लगा दूं। मैं जानता हूं महावीर वाणी और भिखण वाणी का तेरापन्थी अन्त कर चुके हैं और इसे लगभग सब तेरापन्थी

भी समझते हैं।

अब तेरापन्थ को सुधारना तुलसी जी के लिये मुश्किल है। तेरापन्थ सुधार से पहले पचासों साधुओं और सैकड़ों सत्तियों को तेरापन्थ से निकालना पड़ेगा। और यह एक ऐसा परिवर्तन है जिसे समाज सह नहीं सकेगा। आज का छिपा हुआ विश्रन्खल तेरापन्थ समाज, कल दुनियां के सामने तितर-बितर हो जावेगा। तुलसी जी इस आघात को सहन नहीं कर सकते। और जिस दिन तुलसी जी में महान शक्ति का अभ्युदय होगा उस दिन न आज का तेरापन्थ रहेगा और न ही तुलसी जी स्वयं ?

वह तुलसी दूसरा होगा और "ते-रा-प-थ" भी दूसरा

लेकिन वह तेरापन्थ तुलसी जी का नहीं आम जनता का होगा। उस समय तुलसी जी और इनके साधुओं को यह कहने का अवसर नहीं मिलेगा कि भाई तुम दर्शन करने क्यों नहीं आते ? या किसी वहिन को यह कहने की जरूरत नहीं होगी कि तुम्हें 'कान्त सेवा करने का लाभ उठाना चाहिए।

उस समय की दुनियां दूसरी होगी। अगर वास्तव में तुलसी तुलसी हैं तो जमाना स्वयं तुलसी को पूजेगा। तेरापन्थ किसी विशेष जाति की जागीर न रह कर, आम जनता की भलाई के लिए होगा।

लेकिन विषय दूसरा है। तेरापन्थ में किस प्रकार का परिवर्तन होना चाहिये यह मैं अपनी दूसरी पुस्तक में लिखूंगा।

व्यवहार और नीति

(१३)

तेरापन्थी साधुओं के इस प्रकार के कान्डों को देख-सुन कर घृणा होती है। गोरे २ मुंह के देश के नौनिहालों को भी ये लोग अपने षड़यन्त्र में फंसाने मे विशेष प्रयत्नशील रहते है। ये लोग किस तरह इस राष्ट्र सम्पति का दुरुपयोग करने का साहस करते है? नये २ युवक जो विना सोचे-समझे साधु वना लिए जाते हैं कि जवानी साधुत्व के साथ खिलवाड़ करती है। दिन-रात चौबीसों घन्टे आत्म-कल्याण से ज्यादा पतन की बातें कहने सुनने मे इन्हें ज्यादा मजा आता है। किशोरों को धर्म के नाम से फुसला कर इनसे अप्राकृतिक काम करते है, ऐसे चार-पांच कान्ड पकड़े जा चुके हैं और इस तरह का नीचता पूर्ण काम करने वाले कई साधुओं को हम जानते-हैं।

रात्रि को रामायण सुनाने के वहाने लड़कों को वुला कर और उनके माता-पिताओं को रात्रि सेवा का वहकावा देकर ये लोग सारी रात अपनी छातियों से चिपकाये रहते हैं।

लेकिन आंख के अन्वे और कानो के वहरे ये मां-वाप हमारी इन वातों को सत्य समझते हुवे भी पर्दा डालने का प्रयत्न करते हैं।

इन नमक हराम साधुओं का हमारे भाई बहिष्कार नहीं कर सकते परन्तु हमें जैन द्रोही और बदमाश कह सकते हैं ।

मैं अपने भाईयों से प्रार्थना करूंगा, वे अब भी चेते ? समझे ? जब ये साधु आपकी बहु-बेटियों की ओर बुरी निगाह से देखते हैं तो क्या आपको धर्म लाभ होता है ? और हम लोग तो केवल निस्वार्थ भाव से ऐसे साधुओं का विरोध करते हैं, आपके परिवार के साथ कभी मक्कारी नहीं की होगी फिर हमें बदमाश क्यों कहते हो ? फिर जैसा कि तेरापन्थी साधु और भाई मुझे आवारा और लुच्चा, लफंगा कह कर मन ही मन सन्तोष करते हैं, क्या मैं वास्तव में ऐसा हूँ । मेरी समझ में तो आज तक मैंने लुच्चा लफंगा कहने वालों की बहु-बेटियों को कुछ नहीं कहा है और न यह कामना ही है कि कभी ऐसा अवसर मिले ।

वाह भाईयों ! क्या नीति है ? इन साधुओं के चक्कर में पड कर अपनी बहु-मूल्य सम्पति और इज्जत मत गवाओ । अगर तेरा-पन्थ से कुछ प्रेम ही है तो हमारे विचारों की कदर करो । अगर हम निरर्थक और झूठ लिखते हैं तो जोरदार उत्तर दो । यही नहीं अगर मैंने इस पुस्तक में एक शब्द भी झूठ लिखा है तो आप बिना सोचे समझे मुझे मन चाही सज़ा दे सकते हो ।

मैं आपको अपना समझ कर ही यह चेतावनी देता हूँ । अन्यथा किसी को क्या पड़ी है कि अपने खून-पसीने का धन और

समय खराब करे।

मुझे आशा है इस अपील पर मेरे तेरापन्थी भाई अवश्य गौर करेगें।

जिनेन्द्र को मार डालो

(१४)

इस प्रकार के विचार हमारे तेरापन्थी नेताओं के हैं । तुलसी जी और अन्य साधुओं के अधिक उकसाने पर ही ऐसे शब्द मुँह से निकलते हैं। जब 'महासभा" का एक जबरदस्त सेवक मेरे किसी मित्र को कहता है "जिनेन्द्र कुमार की हरकतें ज्यादा बढ़ गई हैं । हम लोग इसे सहन नहीं कर सकते । इसे हम से क्षमा मांग लेनी चाहिए अन्यथा मुकदमा चला कर इसे मार डालेगें।" तब इन अहिंसको से विद्रोह करने का मेरा मन तड़प उठता है ।

वकील साहब ! आप जिनेन्द्र को साधक हस्तिमल न समझें कि उसकी पुस्तक पर पाबन्दी भी लगादें । और वह चुप ही रहे ?

इसे अपने पिट्ठुओं द्वारा डरा, धमका, पिटा कर बीकानेर डिवीजन से बिहार तक भेज दे और वह अपने विशेष सिद्धान्तों की अवहेलना न कर सकने के कारण आपको उत्तर न दे सके । यहां जिनेन्द्र कुमार है ।

अथवा साधु सम्प्रदाय में ऐसे सन्यासियों का बहुमत है जो जैनेत्व से कोसों दूर हैं ।

यह संकट तो बहुत पहले पैदा हो गया था, परन्तु श्री तुलसी जी की नई २ स्कीमें इसे और ज्यादा गहरा बना रही हैं । जो लोग तुलसी जी को जानते हैं, वे इसे भली प्रकार समझ सकते हैं । मैं भी इस संकट का "तेरापन्थ के सिद्धान्त और व्यवहार" नामक इसी पुस्तक में जिक्र करूँगा।

एक बात और जैसा कि श्री तुलसी जी फरमाते हैं—श्रद्धा, समझदारी का लक्षण है। लेकिन यह सरासर गलत राय है। सोचने और समझने की ताकत का दिवाला निकालने वालों के लिये श्रद्धा का मूल्य है । परन्तु एक जमाने से चलने वाले 'न्याय' का हम क्या अर्थ लगावे ? क्या हम मजिस्ट्रेट पर विश्वास करलें कि वह जो न्याय करेगा वह हमारे लिये मान्य है ? नहीं ! हमें अपने बचाव के लिये तर्क प्रस्तुत करने होंगे । अगर फिर भी मजिस्ट्रेट ने गलत निर्णय दे दिया तो हम और बड़े न्यायालय में अपील करेंगे।

मानना पड़ेगा, तर्क का भी कुछ मूल्य है । श्रद्धा और विश्वास उसी सीमित दायरे तक हम मान सकते हैं जहां हमारी तर्कों का कोई दूसरा उत्तर न दे सके।

आज जो भिखण जी के शिष्य श्रद्धा पर बहुत ज्यादा बल देते हैं—उसका क्या कारण है ? स्पष्ट है तुलसी जी हमारी बातों को सत्य

समझते हुए भी उत्तर नहीं दे सकते । इसी वास्ते "गुरु पर श्रद्धा रखो"—यह कह कर चुप हो जाते हैं । परन्तु तक को तो तुलसी जी को भी मानना पड़ेगा । तुलसी जी की मान्यतानुसार "तर्क के बल" पर ही भिषण जी ने स्थानकवासी सम्प्रदाय का बहिष्कार किया था। अगर "श्रद्धा" का मूल्य अधिक था तो उनकी भी आचार्य श्री रुघनाथ जी के प्रति महान श्रद्धा होनी चाहिये, और अगर श्रद्धा होती तो शायद तेरापन्थ की स्थापना नहीं होती । मानना पड़ेगा तर्क, तर्क है और श्रद्धा, श्रद्धा । दोनों का रिश्ता जरूर निकटतम है, परन्तु स्त्री-पुरुष जैसा। तर्क का उत्तर मिलने पर ही श्रद्धा होती है।

=:o:=
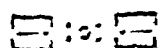
श्रद्धा-अंध-विश्वास की जननी

(१६)

खैर। अगर श्रद्धाका मूल्य मान भी लिया जाय तो इस वैज्ञानिक और आलोचनात्मक युग में नहीं चल सकती। शास्त्र और महा-पुरुषों के प्रमाण से ज्यादा आज "मस्तिष्क प्रमाण" चलेगा। यह स्पष्ट है और इसका कारण है। आज भारतवर्ष के विशेष और बड़े बड़े गुट श्रद्धा पर अधिक विश्वास रखते हैं, परन्तु यह उनका स्वार्थ है। हम, जिन्हें श्रद्धा से आज तक नुक्सान ही नुक्सान हुआ है इस पद्धति को नहीं मान सकते।

आज हमारे बुजुर्ग साधु-सन्यासियों के दर्शन करने को कहते हैं। परन्तु हम कैसे मान लें कि एक विशेष सम्प्रदाय के लोग, विशेष प्रकार का कपड़ा पहनने के कारण वास्तव में ही दर्शन के योग्य हैं। यह तो मानना ही पड़ेगा—हमारे समाज में अभी साधु-प्रथा समाप्त नहीं हो सकती। लेकिन अगर साधुओं में साधुत्व के लक्षण ही नहीं तो अपने शिरोमणि मस्तिष्क को उनके आगे क्यों झुकाया जाय।

हमारा न तुलसी जी से विरोध है और न उनके साधुओं से।

हमारा विरोध केवल व्यवहार और नीति तक है। अगर हम साधुओं को वास्तव में ही योग्य देखेंगे तो "श्रद्धा" की जरूरत ही नहीं, हमें उनकी इज्जत करनी ही होगी। भगवान महावीर, भीखण, गांधी को स्वर्गवास हुवे आज वर्षों हो गये हैं, फिर इनके प्रति श्रद्धा क्यों है? स्पष्ट है कि गुणों की कद्र करनी ही होगी ?

श्रद्धा, अन्धविश्वास की जननी है। एक समय तेरापन्थी साधू जैन शास्त्रों और सूत्रों को पढ़ने की आज्ञा नहीं देते थे। और साधुओं के प्रति अटूट "श्रद्धा" के कारण से ही हम इन बातों में कोरे रहे। जब हम बिल्कुल चोपट हो गये और नई पीढ़ी का आविष्कार हुवा तो इस श्रद्धा को दूर ढकेल दिया गया। अब हम शास्त्र पढ़ सकते हैं। धर्म की अच्छाइयों-बुराइयों का ज्ञान हो जाता है। लेकिन अन्ध श्रद्धा के कारण से ही आज तक हम अज्ञान में थे। अगर तेरापन्थ पर हमारी श्रद्धा है तो आचार्य तुलसी पर भी श्रद्धा रखनी पड़ेगी। और तुलसीजी आज्ञा देते हैं कि मेरे पर विश्वास रखो। हम आगे बढ़ ही कैसे सकते हैं और न हम विना तुलसीजी की आज्ञा से तेरापन्थी साधुओं की आलोचना ही कर सकते हैं।

इस प्रकार की श्रद्धा से केवल एक व्यक्ति को लाभ होगा। वह जैसा चाहेगा हमें नचावेगा। हम उस स्वार्थ को न तो समझ ही सकते हैं और न सोच ही सकते हैं।

लेकिन इसका अर्थ निरर्थक और व्यर्थ है। और उनका हमे

आचरण करना ही नही चाहिये ? हमें तेरापन्थी संस्कृति, सभ्यता की रक्षा करनी है किन्तु विज्ञानिक तरीकों से। जब तक हम इसे ठीक तरह से नहीं समझेंगे, सामाजिक विकास निर्माण में बिल्कुल असमर्थ रहेंगे।

हमें इस प्रकार से अध्ययन करना चाहिए कि कुछ मन पर असर पड़े । साधुओं का व्याख्यान सुनने का यह मतलब नही कि वास्तव में हमें धर्म हो गया। व्याख्यान सुनना, सामाजिक पोषद और प्रतिक्रमण सब मानसिक शांति के लिये किये जाते हैं। धर्म तो आचरण और व्यवहार में हैं।

खण्ड दूसरा

तेरापन्थी सभा-संस्थाओं का परिचय

आचार्य श्री तुलसी का महत्वपूर्ण आविष्कार अणुव्रत संघ

(१७)

चारित्र निर्माण ही इस संघ का मुख्य उद्देश्य बताया जाता है। इसके लिए भारत के ही नहीं, विदेशों तक के नेताओं, राजदूतों, पत्रकारों गणमान्य व्यक्तियों की सम्मतिया आचार्य श्री तुलसी के पास जमा है। यही नही, जहां कही आचार्य श्री पधारते हैं वहां के प्रसिद्ध व्यक्तियों को "किसी तरह" बुला कर अणुव्रत संघ के लिये प्रशंसा पत्र लिखा लिये जाते हैं।

पत्रकारों एवं प्रचारकों को सैकड़ों रु० सहायता दिला कर इस संघ का प्रचार करवाया जाता है।

हमें इस संघ के नियमों के बाबत कुछ भी नहीं लिखना है। संघ के उद्देश्य अच्छे ही होगें। परन्तु बता देना आवश्यक है कि आज तक इस रहस्यात्मक एवं गड़बड़ संघ के प्रचारार्थ लाखों रु० निरर्थक व्यय हो चुके है। अगर इसी तरह श्री तुलसी जी अपनी

जिद पर अटल रहे तो निरन्तर समाज के खून-पसीने की कमाई का अपव्यय होता रहेगा ।

यह भी पाठकों को बता देना आवश्यक है कि जिन नेताओं सरकारी मन्त्रियों, लेखकों और राजदूतों ने आचार्य श्री को लम्बी २ सम्मतियां लिख कर दी हैं वे सब के सब अणुव्रती नहीं है। अफसोस तो इस बात का है हमारे उक्त सज्जन प्रतिदिन अपने व्याख्यानों में फरमाते हैं कि उनका समूचा जीवन जनसेवा के लिये हैं । देश के चरित्र-निर्माण में वे अपना जीवन लगा देंगे । फिर इस संस्था के वे लोग सदस्य क्यों नहीं बनते ?

स्पष्ट है उन्हें आचार्य तुलसी एवं अणुव्रत संघ से कुछ भी मतलब नहीं ।

पत्रकार इस वास्ते अणुव्रत संघ का प्रचार करते हैं कि उनका जमाने से भूखा पेट भरता रहे ।

नेता लोग इस वास्ते अणुव्रत संघ की सिफारिश करते हैं कि कड़कड़ाते नोटों के अलावा भविष्य में तेरापन्थियों के बहुमूल्य "वोट" उनके वास्ते सुरक्षित रहें ।

और

आचार्य श्री तुलसी ने इस संघ की केवल इस वास्ते स्थापना की कि जमाना इन्हें दूसरा महात्मा गांधी समझे । परन्तु यह उनके वश की बात नहीं है । जो आदमी रोटी खाता है वह कुछ सोचता सम-

मकता भी होगा ।

मेरा सबसे बड़ा प्रश्न आचार्य श्री तुलसीजी से यही है कि ऐसे कौन से विशेष अधिकार के बुत्ते पर आपने इस श्रावकों की संस्था का संस्थापन कर स्वयं सत्ताधीश बन बैठे ?

अगर आचार्य श्री तुलसी अपने आपको जैनाचार्य समझते हैं तो हमें बतावें कि ऐसा कौन से सूत्र और शास्त्र मे लिखा है कि जैन साधू किसी दोषपूर्ण सामाजिक संस्था का संस्थापन कर सकता है ।

जैसा कि अणुव्रत संघ की विधान पुस्तिका मे लिखा है-आचार्य श्री तुलसी इस संघ के संस्थापक हैं । परन्तु यह केवल रेत की दीवार है। जनता को किसी भी प्रकार से धोखा दिया जा सकता है ।

भगवान महावीर द्वारा संस्थापित "चार तीर्थो" पर डाका डालने वाले आचार्य तुलसीजी को सोचना चाहिये था कि अणुव्रत संघ आज से दो हजार वर्ष पूर्व भगवान महावीर द्वारा स्थापित हो चुका था । स्वयं को संस्थापक कहकर जैन शास्त्र विरुद्ध काम करना क्या एक आचार्य या साधू को शोभा देता हैं। यह मिथ्यात्व है, धोखा है, कपट है। अणुव्रत संघ एक श्रावकों की संस्था है। और श्रावक चार तीर्थों मे है । तीर्थ का संस्थापक भगवान के सिवाय और कोई नहीं हो सकता । केवल अपने "नाम" का विशेष प्रचार करने एवं वाह-वाही लूटने वास्ते तुलसीजी ने भगवान की यह चोरी की ।

अणुव्रत संघ के नियमों ने जैन शास्त्रों पर कितने कुठाराघात किये हैं। वे सब पाठक इस पुस्तक की विधान पुस्तिका में पढ़ लें।

अणुव्रति कौन ?

(१८)

भगवान महावीर तो कहते है सम्यक ज्ञान और दर्शन विना अणुव्रती और महाव्रती नहीं बन सकते। परन्तु हमारे आचार्य मिथ्यात्वियों को भी अणुव्रती बना रहे हैं, जो जैन शास्त्रों के विरुद्ध है। इसके अलावा आचार्य श्री ने अपने प्रवचनों में यह भी कहा कि अगर हम किसी अजैनी को जैनी बनने को कहेंगे तो वह नहीं बन सकेगा। शायद आचार्य श्री के विचारों से जैन धर्म ऐसा है कि जनता इससे घृणा करती है। परन्तु अगर हम किसी को अणुव्रती बनने को कहेगे तो वह ना नहीं कर सकेगा। ऐसे संकीर्ण विचार हमारे इस जैन नेता के हैं। जैनोन्नति का ढिन्ढोरा पीटने वाले और भगवान महावीर का पक्का श्रद्धालु होने का दावा करने वाले के इस तरह के संकीर्ण विचार हैं।

मानना पड़ेगा श्री तुलसी जी जैन धर्म और भगवान महावीर का नाम मिटाने पर तुले हुवे हैं। अणुव्रत संघ को अपनी जागीर समझने के कारण, इस संघ का सदस्य बनाना और संघ से

निकालना भी आपका काम है । परन्तु यह सब सावद्य प्रवृतियां हैं और जैन शास्त्र विरुद्ध है ।

इन सब का आचार्य तुलसी के पास कुछ भी उत्तीर नहीं हैं । अब प्रमाणित हो जाता है श्री तुलसी जी जैनी नहीं हैं केवल "जैन" शब्द का आश्रय लेकर हम पर मनमाने अत्याचार कर रहे हैं ।

दूसरा प्रश्न, जो आचार्य तुलसी से पूछा जाता है कि आप जो बार फरमाते है अणुव्रत संघ आत्म कल्याण का सिधा रास्ता हैं ! क्या यह सही है ।

मेरे जैसे साधारण व्यक्ति को डरा, धमका या फुसला कर भले ही निरूत्तर कर दे परन्तु कोई भी जैन विद्वान इस तर्क को नहीं मान सकता ।

इस संघ का कोई भी धार्मिक-सामाजिक दृष्टि कोण नहीं है । यह हम पहले ही लिख चुके है । अपने और तेरापन्थ के प्रचार के लिये ही इस महत्वपूर्ण योजना को चालू किया जा रहा है ।

भिखण की गलती तुलसी सुधारे !

(१६)

श्री तुलसी जी जब भी अजैनियों से मिलते हैं तो सब से पहले घड़े-घड़ाये "दान-दया" के प्रश्न सामने आते हैं। श्री तुलसी इनका कोई उत्तर नहीं दे सकते। और अगर घुमा-फिरा कर कोशिश भी की जावे तो पोल खुल जाती है। कारण सारी दुनियां जानती है किसी गरीब की सहायता से, असहाय बीमार की चिकित्सा से, सन्त-महात्माओं और लूलों-लंगड़ों को खाना-वस्त्र देने से धर्म होता है। परन्तु भिखण जी ने इन सब कामों में एकान्त पाप कहा है। तेरापन्थ के सिद्धान्त, तेरापन्थी साधुओं के अलावा, जो भी काम होते हैं उन सब में पाप समझते हैं।

अगर तुलसी जी दुनियां का मुँह बन्द करने वास्ते उक्त कार्यों में धर्म बतला दें तो स्पष्ट भिखणजी की अवज्ञा होती है।

गहरे असमन्जस के बाद इस संघ को खोलने का निश्चय किया। वैसे इस संघ के एक मात्र उत्तराधिकारी आप ही हैं। और

जब तक जीवेगें, शान से तानाशाही चलावेंगे, ऐसा निश्चय है। इस संघ के लगभग सब सदस्य अवकाश प्राप्त तेरापन्थी व्यवसायी और भोली-भाली तेरापन्थी महिलायें हैं। इन सब का आचार्य श्री ढिन्ढोरा पीटते रहते हैं। गत दिनों आपने भारत के राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद को एक पत्र लिखा था —"अणुव्रत संघ मेरे जीवन का साध है। इस संघ ने बहुत तरक्की की है। आज तक .. .. हजार अणुव्रती बन चुके हैं।" आगे आप लिखते हैं — "मेरी आपके साथ सद्भावना है और रहेगी। मैं उनका हूँ जो सत्य-अहिंसा के आधार पर जीवन यापन करते हैं। अणुव्रत संघ इस में बहुत सहायक होगा। देश के सुन्दर भविष्य निर्माण में, मैं और मेरे शिष्य काम कर रहे हैं।" आदि इसी प्रकार का एक पत्र लिखा। प्रसंग वश लिख देना आवश्यक है कि श्री भिखण जी की आज्ञानुसार तेरापन्थी साधु पत्र दि सन्देश नहीं लिख सकते। ऐसा उन्होंने लिखा भी है —

> "गृहस्थ साथै कहै सन्देशा, तो भेलो हुवै सम्भोग जी।
> तिणने साधु किम सरधीजै, लाग्यो जोगनै रोग जी॥
> समाचार विवश सुधि कही, सानी कर गृहस्थ बुलाय जी।
> कागद लिखावे कहि आमना, पर हाथ देवै चलाय जी॥"

श्री भिखण जी ऐसे साधुवों को साधु नहीं समझते थे। श्री तुलसीराम जी ने इस विषय में बोलते हुए कहा था कि "वर्तमान में

जो सन्देश दिया जाता है उसका मतलब समाचार नहीं है । वह धर्मोपदेश है । हमारे विचार जो व्यक्ति जानना चाहते हैं, उन्हें या उनके द्वारा प्रेरित अन्य व्यक्ति को हम बताते हैं । और यह बताना बिल्कुल सही है । — निर्वद्य है" निर्वद्य और सावद्य के बारे में अधिक न जानने के कारण हम ज्यादा न लिखेंगे परन्तु तेरापन्थी साधु, सन्वेगी और स्थानक वासियों को असाधु समझने का एक यह कारण भी बतलाते है कि ये लोग पत्र लिखते-लगाते हैं। परन्तु अब तुलसी ने भी यह परम्परा अपना ली है। इसके अलावा स्थानक स्थापित करना, पुस्तके लिखना आदि और भी कई अन्य सम्प्रदायों की परम्पराए तेरापन्थियों ने अपना ली है । अत हमारे विचार से उन्हें असाधु नहीं कहना चाहिये या अपने आपको सच्चे साधु होने का दावा नहीं करना चाहिये । यही नही अब तो तुलसी जो ने भिखण जी की मर्यादाओं को खूटी पर टाग कर, तार और प्राईवेट पत्र लिखवाना भी आरंभ कर दिया है ।

खैर ! अणुव्रत स घ के स स्थापन के पश्चात इस नैतिक प्रचारक स घ के हजारों सदस्य बनाये गये । इन लोगों ने कैसी और कितनी नैतिक उन्नति की है। इन सब का हवाला मैं कुछ प्रमुख अणुव्रतियों के संस्मरण लिख कर समझाऊंगा ।

१. ये स जन रतनगढ के है । अणुव्रत संघ के पक्के प्रचारक और सदस्य ! तो श्री तुलसी जी के विशेष कृपापात्र साहब हमारे

कलकत्ता के दफ्तर मे पधारे और नौकरी के लिये हम से बात-चीत की। हमारे पास कोई खाली जगह न होने के कारण उन्हे स्थित समझा दी। तो उन्होंने कहा कि अणुव्रतियों पर मेरा बहुत प्रभाव है और आप मुझे प्रचारक रखलें। मैं पत्र के काफी ग्राहक बनाऊंगा। हम ने कमिशन की बात कर ली। सन्ध्या को पक्की बात करने वे पुनः दफ्तर में पधारे और ,'टूर" पर जाने वास्ते रेल किराये के ५०) मागे। हम ने रु० और रसीद बुक उन्हे दे दी। परन्तु इन अणुव्रती महोदय ने ५० रु० के अलावा ५-७ ग्राहक और बना कर सब रुपये हजम कर लिये। कई पत्र लिखे पर उत्तर नदारद।

२. सरदार शहर के इस अणुव्रती सेठ को तो लगभग समस्त तेरापन्थी सज्जन जानते ही हैं। हम ने अपने समाचार पत्र के मुख्य पृष्ठ पर आचार्य श्री तुलसी का चित्र छाप दिया था। इससे ये सज्जन इतने नाराज हुवे कि कई असभ्य उपाधियां देने के अलावा हमारा कंठ तक पकड़ लिया। हमारा स्टाफ भी खड़ा था। किसी तरह उन्हे समझाने का प्रयत्न किया कि तुलसी जी की तस्वीर छाप कर हम ने कोई पाप नहीं किया है। परन्तु वे सज्जन न माने। अन्त में उन्हें जबरदस्ती दफ्तर से बाहर करना पड़ा। सन्ध्या को वे ही सज्जन अपने कुछ तेरापन्थी लठैतों के साथ पुनः पधारे और आदेश दिया कि अपनी गलती का प्रायश्चित्त करो, नहीं तो "माथा" ठीक कर देगें।

हमने समझाया कि हमारा मस्तिष्क ठीक है और तस्वीर छाप कर तुलसी जी का अपमान नहीं किया है। लेकिन वे सज्जन किस तरह अपने आपे में आये। अगर पूरा इतिहास लिखें तो यह पूरी पुस्तक इसी एक संस्मरण में समाप्त हो जावे। उन सज्जन और लट्ठधारी तेरापन्थियों को हटाने वास्ते हमे पुलिस तक को बुलाना पड़ा।

३. अब हम तीसरे अणुव्रती भाई की भी पांच-सात मिनट की एक मुलाकात का जिक्र करेंगे। आपका व्यवसाय बहुत लम्बा-चौड़ा है। परन्तु भारत सरकार के साथ जितनी बेईमानी आप करते है, दूसरा अणुव्रती नहीं।

इस तरह के एक नहीं सैकड़ों अणुव्रती आपको ऐसे मिलेंगे जिनका प्रधान पेशा देश और समाज के साथ गद्दारी करना हैं।

जब मैंने एक पत्रकार से पूछा— आप क्यों ऐसे गड़बड़ संघ का प्रचार कर रहें हैं तो उसने कहा— यार ! पेपर में बहुत घाटा है, अगर एक-दो कालम तुलसी जी के लिख दे तो हमारा क्या बिगड़ेगा। फिर लिखने से २-४ सौ की आमदनी भी तो हो जाती है।

एक ऐसे नेता जी से भी मै मिला, जिन्होंने पूरे दो सौ शब्दों का प्रन्शासा पत्र अणुव्रत संघ के लिये आचार्य श्री तुलसी को पेश किया था। उन से भी मैंने संघ के बाबत पूछा। उन्होंने कहा "हमारी संस्था को पैसो की जरूरत है और आगामी चुनाव मे भी मै खड़ा होने का विचार कर रहा हू।

अणुव्रत संघ का आदर्श

(१०)

इस तरह का अणुव्रत संघ है सैकड़ों तेरापन्थी महिलायें भी इस संघ की सदस्या हैं इन में से बारह से अधिक स्त्रियों को मैं जानता हूं, जो साल मे आठ महिने आचार्य श्री तुलसी जी के साथ २ घूमती रहती है और अपने नौकरों एवं तेरापन्थी सन्तों के साथ ...... । अणुव्रतों के आदर्शों का इसी प्रकार प्रचार होता है ।

आचार्य श्री तुलसी और समाचार-पत्र

(२१)

एक विदेशी पत्र में भी अणुव्रत संघ के बाबत हम ने कुछ पढ़ा था । परन्तु वह कोई प्रेस समाचार नहीं, एक विज्ञापन था ।

रोजाना कई दैनिक पत्रों में अणुव्रत संघ और तुलसी जी के बारे में छपता रहता है परन्तु वह पत्रों के सम्पादकों की राय नहीं होती, संवाददाताओं को रिश्वत देकर तुलसी जी के विरुद्ध भ्रमात्मक प्रचार करवाते रहते हैं ।

अणुवृत संघ से लाभ

११

अब आप सोचेगें इस तरह के संघ की क्या आवश्यकता पड़ी। जब न जनता इसे चाहती और मानती ही हैं और न हमें तुलसी के कार्य-कर्मों से कुछ लाभ भी हो रहा है।

तुलसी जी इस संघ को चला कर दो बड़े २ लाभ उठाना चाहते है।

१. महात्मा गान्धी बनने की हवस !

२. भिखण जी के उट-पटांग सिद्धान्तों का सुन्दर तरीके से उत्तर !

शायद हमारी यह भूल हो कि इस संघ से देश को किसी भी प्रकार का लाभ नहीं हो रहा है, परन्तु यह सीधी-सादी बात तो हम बिना हो-हुज्जत मान सकते हैं कि जितने रुपये प्रति वर्ष अणुवृत संघ पर व्यय किये जाते हैं उतने से कई हाई स्कूल, पुस्तकालय, वाचनालय आदि खुल सकते हैं, और हजारों मनुष्य उक्त विषयों से लाभ

हटाकर जैन धर्म के प्रति श्रद्धांजली अर्पित करेंगे । परन्तु स्कूल खोलने में तो तेरा-पन्थी पाप समझते हैं ।

अत: ऐसा देश-सेवा का अधम कार्य करके जैनियों की संख्या बढाना, हमारे तुलसी जी के लिए उचित प्रतीत नहीं होता ।

धन्य है महाराज !

भले ही आज आपकी शान-बान ज्यादा है, परन्तु भारत के भावी इतिहास में जयचन्दों की नामावली में सर्वप्रथम आपका नाम सुरक्षित है ।

याद रखें—

आज बटोरने वालों की इज्जत है, परन्तु कल देने वाले की होगी ।

तुलसी जी के इशारों पर चलने वाली परमार्थिक शिक्षण संस्था

(१३)

इस संस्था की जयपुर में स्थापना की गई थी।

आचार्य श्री तुलसी का अपने इलाके (बागड़)से बाहर जाने का यह पहला चान्स था। हमेशा की तरह इनके सामने अनेक बड़े २ और जटिल प्रश्न उठ खड़े हुए। तेरा पन्थ शास्त्रों की अ‌संगत बातों के अलावा सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न था—बाल दिक्षाए बन्द होनी चाहियें। यह एक आन्दोलन सा बन गया। आम जनता ने इस आन्दोलन में योग दिया। स्थानक-वासी उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज का चातुर्मास भी उस समय जोधपुर में ही था। उन्होंने भी 'बाल दिक्षाए बन्द होनी चाहिये' में अपनी स्वीकृति प्रदान की। इस विषय के अनेक दल भी बन गये। जो बाल दिक्षा का सरे-आम विरोध करते थे।

तुलसी जी को अपने प्रचार की बहुत भूख है, तेरा-पन्थ बढ़ाने

की भी लगन है। नई २ जगहों में जाने से इनके श्रावक भी नहीं मिल रहे थे। खाने-पीने और ठहरने की असुविधाएं सामने थीं। बहुत सोच विचार कर अन्त में परमार्थिक शिक्षण संस्था की स्थापना की गई। इस संस्था का एकमात्र यही उद्देश्य बताया जाता है कि यहां विद्यार्थियों को धार्मिक अध्ययन करवाया जाता है।

परन्तु संस्था को खोलने की जो मुख्य आवश्यकताएं है, उनसे पाठकों को परिचित करवायेंगे।

आचार्य श्री तुलसी ने आंदोलन-कारियों को आश्वासन दिया कि भविष्य में वे केवल योग्य व्यक्तियों को ही दिक्षा देंगे। इस भ्रम जाल को जनता समझ नहीं सकी, और इस आश्वासन से जोश ठण्डा पड़ गया।

दिक्षार्थियों की मशीन

(१४)

तेरापन्थ में दिक्षा लेने वाले बहुत कम हैं, और जो हैं उनमें अधिकांश लड़कियां। तेरा-पन्थी साधु-सतियों के जहां-तहां चातुर्मास होते हैं, वहां के प्रत्येक लड़के-लड़की से एक प्रश्न पूछा जाता है— "तुम ब्याह करोगे अथवा साधु बनकर आत्म-कल्याण करोगे ?" फिर उन्हें संसार से भय दिखाते हैं। दुनिया में जीने की मुसीबतें समझाते हैं, और अन्त में अपनी ओर आकृष्ट कर दिक्षा के लिये राजी कर लेते हैं।

दिक्षा और विवाह का एक ऐसा प्रश्न है जिसे बच्चे-बच्चियां प्राय नहीं समझ सकते। लड़कों को साधु बनने की आज्ञा उनके मां-बाप नहीं देते। कारण—बुढ़ापे का सहारा लड़का है, लड़की नहीं। लड़की तो जब तक जीवेगी, मां-बाप पर भार स्वरूप है। ब्याह में रुकावट और हजारों का व्यय, छुछक, मुकलावा, भात आदि क्या नहीं लड़की को देना पड़ता ! प्रति वर्ष २-४ सौ रुपये लड़की को देने ही होते हैं। परन्तु लड़के के लिये यह नियम लागू नहीं। अतः हमारे

समझदार तेरा-पन्थी भाई लड़कों को साधु बनने की आज्ञा देकर मूर्खता नहीं दिखाते।

परन्तु जब साधु महाराज लड़कियों से पूछते हैं — "तुम ब्याह करोगी अथवा साध्वी बनकर आत्म-कल्याण करोगी ?" नादान बच्ची क्या उत्तर दे ? फिर ब्याह का नाम लेना हमारे समाज में बेह्यायी समझी जाती है। साधु जी के प्रश्न का दुधमुंही बच्ची कुछ उत्तर नहीं देती और गुरुजी फैला देते हैं कि अमुक लड़की दिक्षा लेगी, आदि। इस लड़की की बहुत प्रशंसा की जाती है। और बढ़ा चढ़ा कर उसे इस तरह बना डालते हैं कि वह ना नहीं कर सकती। लड़की के मां-बाप भी इस मामले में चुप रहना उत्तम समझते हैं।

खैर, साहब। ६-१० साल की लड़की को इस संस्था में पहुँचा दिया जाता है। वहां भी इस पर भ्रम चक्र चलाया जाता है। पाच-सात साल आचार्य तुलसी जी अपने साथ घुमाते फिरते और संस्था का प्रदर्शन करते हैं। और जब देखा कि लड़की के विचार न बदल जावें तब फटाफट उसे साध्वी बना डालते हैं। यह है आचार्य तुलसी का योग्य दिक्षाओं का चुनाव !

★

दिक्षा या धोका

(२९)

पाठकों के मन में एक प्रश्न उठेगा—क्या लड़कियां ही ज्यादा तर दिक्षाएं लेतीहैं ? युवकों के दिल मे क्या साधुत्व के वास्ते श्रद्धा नहीं ?

इसका उत्तर मेरे पास एक ही है। हमारे नोहर में ६०-७० घर तेरा-पन्थियों के हैं। यहां की लगभग दो दर्जन लड़कियों साध्वियां बन चुकी हैं । कई तैयारी में हैं । जबकि लड़के साहब साधुओं को नमस्कार करना भी उचित नहीं समझते, फिर दिक्षा लेने का तो प्रश्न ही नहीं उठता ? गत वर्ष एक बन्धु दीक्षा लेने की तैयारी कर रहा था परन्तु इने गिने दिनों में ही उसका नशा उतर गया।

और अगर कोई भोला-भाला फंस भी जावे तो उसे परमार्थिक सस्था में घुमा-फिरा कर योग्य नहीं बनाया जाता। उसे तो फटा-फट साधु बना लिया जाता है । परन्तु इन वर्षों में, अधिकांश दिक्षा लेने वाले लड़के पुनः तेरा-पन्थ का बहिष्कार कर चुके हैं।

लड़कियां या लकड़ियां

(२६)

जिस तरह लकड़ियां इधर-उधर बिखरी देखते हैं और जब इच्छा होती है हम उन्हें चुनकर संवार लेते हैं और जब इच्छा होती है तो फैंक भी सकते हैं । इसी प्रकार लकड़ी से भी बहुत कम कीमत तेरा-पन्थ में लड़कियों की है ।

ऐसी युवतियां भी तेरा-पन्थ साधु समाज में हैं जो अब रहना नहीं चाहतीं । ऐसी साध्वियों में अधिकांश ऐसी मिलेंगी जिन्हें तेरा-पन्थी साधुत्व पसन्द नहीं है । कुछेक ऐसी भी मिलेंगी जिन्होंने बिना सोचे समझे दिक्षा ले ली थी और अब गृहस्थी बसाना चाहती हैं ।

परमार्थिक शिक्षण संस्था की असली आवश्यकता

(२७)

इस संस्था को खोलने की असली आवश्यकता आहार-पानी और ठहरने की व्यवस्था है, और यह बात बिल्कुल ठीक है। शत-प्रतिशत तेरा-पन्थी श्रावक भी इस बात से सहमत हैं।

आचार्य तुलसी का दल-बल जहां कहीं पधारता है, उससे पहले यह संस्था वहां पहुँच कर प्रचार करना आरम्भ कर देती है। तुलसी जी वास्ते किराये पर या मुफ्त में स्थान तलाश किया जाता है। किसी बढ़िया जगह में विस्तृत पण्डाल बनाया जाता है, लाउड-स्पीकर लगाये जाते हैं। और जब पूरा प्रबन्ध हो जाता है तब हमारे आराध्य देव उस जगह पधारते हैं।

वैसे कई श्रावकों को भी नियमादि दिला कर तुलसी जी अपने साथ ही रखते हैं। परन्तु इस संस्था का माल ही साधुओं को हजम होता है। और यही इस संस्था के निर्माण का विशेष उद्देश्य है।

★

यह संस्था नहीं, लफंगों का आश्रय स्थान है !

(१८)

इस संस्था के दो-चार ऐसे कार्य- कर्ताओं से परीचित हूं जिनके दिलों में सदैव जवानियां सहवास करती हैं। उनका न आचरण शुद्ध था और न ही व्यवहार। मजे की बात तो यह है जनता और श्री तुलसीजी इन लोगों की पाप लीलाओं और काले व्यापार को जानते हैं। परन्तु वे सज्जन अभी तक तेरापन्थ समाज के अग्रगण्य हैं। उनकी अच्छी इज्जत-आबरु है।

परन्तु उन बहनों के बारे में आचार्य श्री ने नहीं सोचा, जो वर्षों इस संस्था में रही हैं। इनमें से दो बहिनें तो संस्था से निकाली जा चुकी हैं। कुछ ऐसी लड़कियां साध्वी भी बन चुकी हैं। खैर ! ऐसी है तुलसी जी की दिक्षार्थी मशीन नामक ... .. गृह ! और इस प्रकार के लफंगे कार्य-कर्ताओं द्वारा व्यवस्थित हो रही है।

एक बात और ! श्री तुलसीजी के साथ ही इस संस्था का प्रधान कार्यलय बदलता रहता है।

चन्दा ?

(२६)

जैसा कि श्री तुलसी फरमाते हैं इस संस्था से उनका किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। परन्तु उक्त बातों से तुलसी जी का यह तर्क बिल्कुल असत्य प्रमाणित हो जाता है। इस संस्था में भरती करना या बाहर निकालना आचार्य श्री के हुक्म से होता है और संस्था का खर्चा गांव २ से चन्दा करके चलाया जाता है।

यह एक सावद्य प्रवृति है और इसे चालू करने वालों को कैसे जैन साधु माना जा सकता है ?

आचार्य श्री तुलसी के इस प्रकार के शास्त्र विरुद्ध कामों को देख-कर कुछ साधु तेरापन्थ में रहना नहीं चाहते हैं। जो अधिक कट्टर हैं, वे तेरापन्थ का निर्भीक भन्डा फोड़ कर बहिष्कार भी कर चुके हैं। परन्तु अभी कई ऐसे साधु इस पन्थ में विवशता वश पड़े हैं।

यह सिसकता साधुत्व

(३०)

किस तेरापन्थी की हिम्मत है जो तुलसी जी की आज्ञानुसार न
लें गत वर्ष ऐसे दो साधुओं से भी हमारा साक्षात हुवा जो तेरा-
न्थ में वर्षों रहे हैं। और अ त में उन्हें तुलसी पन्थ से निकलना
पडा। ऐसे और भी कई साधु हैं। इन्होंने बताया कि साधुओं के
प रस्परिक व्यवहार ने और संघ में फैले भ्रष्टाचार और व्यभिचार
से जब हमारी आंखें खुली तो अपने आपको एक विशाल नरक कुन्ड
में पड़े देखा। छोटे-छोटे मुनियों के साथ अप्राकृतिक कांड होते देखे।
शास्त्रों और सूत्रों के जानकार बड़े २ विद्वान साधुओं को आत्म-पतन
करते देखा। हम ने सोचा कि इनसे ज्यादा अच्छे तो गृहस्थ हैं।
कम से कम साधुत्व का ढिन्ढोरा तो नहीं पीटते। और तुलसी जी को
छोड़ने में ही हित समझा। अब हम स्वतन्त्र हैं।

★

तुलसी के दुश्मन !

(३१)

परन्तु संघ से बाहर निकला साधु तो तुलसी जी का दुश्मन है। इनको "टलोकड़" कह कर अपमान किया जाता है। हर प्रकार की यातनायें और कष्ट दिये जाते हैं। पचासों तरह से बहका कर अपमानित कर, कुछ इस प्रकार की उस साधु की भावनायें कर दी जाती हैं कि इस दुनियां से उसका मोह टूट जाता है। अब या तो उसे आत्म-हत्या करने को विवश कर दिया जाता है अथवा गृहस्थ बनने को! गृहस्थ बनने पर भी इन तुलसी के दुश्मनों के मां-बाप इन से बातचीत नहीं करते। उनके लिये संघ से निकलना या मरना एक बराबर है। इनका सम्बन्ध टूट जाता है। इन साधुओं से तेरापन्थी इतनी घृणा करते हैं कि अपने पास तक नहीं फटकने देते। नौकरी के लिये जब ये साधु अपने जान-पहचान वालों को कहते हैं तो इन का मजाक उड़ाया जाता है। अरे! यही नहीं कई नक जो तेरापन्थी श्रावक इन साधुओं की चरण-रज लेने में अपना

सौभाग्य समझते थे, वे आज इन लोगों के साथ इतना अत्याचार करते हैं कि आखिर वे क्या करें ?

इन लोगों की हालत जब हमारे अन्य तेरापन्थी साधु देखते हैं तो संघ से अलग होने का नाम नहीं लेते ।

नरक कुन्ड से निकल कर अन्त मे पुनः हमारे साधुओं को एक ऐसे दल-दल में फंसते देखा है कि बाद मे उनका जीवन बिल्कुल समाप्त हो जाता है ।

जुल्म ढाले, सितम ढाले,
हमारे भी तो दिन हैं आने वाले।

(३१)

फिर भी कई पक्के साधु इन मुसीबतों को फूल समझते हुए तुलसी पन्थ का बहिष्कार कर देते हैं। वर्ष में ५-७ साधु अवश्य निकलते हैं। और सबों की एक ही राय होती है कि तेरा-पन्थ महावीर और भिखण का नहीं, तुलसी का है, और तुलसी नादिरशाह है। आखिर तुलसी से विरोध क्यों ?

इन साधुओं का एक ही सन्देश होता है—"आज तुलसी के हाथ में सत्ता है, वह जिस तरह चाहे हम पर जुल्म-सितम ढा सकता है, जनता की आंखों में धूल झोंक सकता है। परन्तु एक समय हमारे दिन भी आवेंगे, जब सत्य की जीत होगी और होगा आज के तुलसीवाद के विरुद्ध एक बहुत बड़ा जिहाद !"

घरानों के लिये नालायक

(३३)

ऐसे ही एक सन्त गत दिनों राणावास से निकले थे । संघ के अन्दर थे, तभी मेरा आप पर पक्का विश्वास था और अब भी है । शायद कल न हो । परन्तु कल तो अभी दूर है । मैंने नोहर से चल कर इनके दर्शन किये । इन्हें प्रोत्साहन दिया कि महाराज आपने जमाने के सामने एक नया आदर्श रखा है । आप तेरा-पन्थियों से डरे नहीं । हम आपके साथ हैं और सच्चे तेरा-पन्थी आपके रहेंगे ।

यह समाचार एक प्रसिद्ध तेरा-पन्थ सेवक तक पहुँच गया । इन महाशय का दोष नहीं है । प्रत्येक नेता यही समझता है—तेरा-पन्थ का रक्षक वही है और उसके बिना तेरा-पन्थ चल नहीं सकता ।

इन्होंने मेरे पिता जी को लिखा कि—"आपके घरानों के लिये यह शोभा नहीं देता कि टालोकड़ से सम्बन्ध रखें । मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि झूमर जी ने 'टालोकड़' का प्रचार किया है । उसके व्याख्यानों के छापे निकाले हैं" आदि ।

मैंने इसका उत्तर न देना ही उत्तम समझा। कुछ हमारा सम्बन्ध भी ऐसा है कि इन्हें नाराज नहीं किया जा सकता। लेकिन दो प्रश्न बार २ मेरे दिमाग में चक्कर काट रहे हैं।

(१) तेरा पन्थ और तुलसी जी की आज्ञा में न चलने वाले क्या संसार के सब साधु "घरानों के लिये नालायक" होते हैं ? ऐसा इन्होंने कौन सा पाप किया है ? मेरी समझ में तेरा-पन्थी पतित और नमकहराम साधुओं से ये लाख दरजे उच्च हैं। फिर इन्हें नालायक कह क्यों इनका अपमान किया जावे ? और यह कैसे पता चला कि वास्तव में ऐसे 'टलोकड़' हमारे लिये नालायक हैं। हमने उनसे पूछा तो नहीं था कि अमुक साधु लायक है अथवा नालायक।

(२) इतना प्रश्न उठता है कि कल तक जो महाशय ऐसे ही साधुओं के पैरों में पड़कर अपना जीवन सफल समझते थे आज उन में इतना परिवर्तन कैसे हो गया ? क्यों इतनी घृणा हो गई ?

खैर ! ये प्रश्न तो प्रश्न ही रहेंगे। जब तक श्री तुलसी का अहंकारवाद और तानाशाहीवाद चलेगा, तब तक मुझे उत्तर नहीं मिलेगा और न ही मैं पूछूंगा कि जिन लोगों को मैं पूज्य समझ कर दर्शन करता हूँ, बिना अपराध उन्हें 'टालोकड़' आदि कहने का कहां तक अधिकार है।

समस्या का अन्त

(३४)

परन्तु समस्या का अन्त यहीं नहीं हो जाता है। इस प्रकार का प्रचार हमारे माननीय जैन तेरा-पन्थी नेता करते रहते हैं। ईर्ष्या और डाह इनके शरीर के प्रत्येक छिद्रों में घुसी पड़ी है। परन्तु मेरी समस्या अब और ज्यादा गहरी और कठिन बन गई है। "घराने की बे-इज्जती" का भय दिखाकर किस २ को हमारे पूज्य वर्ग उभाड़ेंगे? मेरे जैसे लोग उस समय बात मान सकते हैं जब नेताओं के कहने और करने में अन्तर नहीं होगा।

लेकिन इस अन्ध-भक्ति से तुलसी जी को लाभ हो रहा है। तेरा-पन्थ के अन्य कर्मठ साधु, जो इस हीजड़े सम्प्रदाय में नहीं रहना चाहते, की हिम्मत नहीं होती कि बाहर निकल कर वास्तविक सत्य का प्रचार करें। यही तुलसीजी चाहते हैं और जो तुलसी जी चाहते हैं वही इनके श्रावकों को चाहना चाहिये।

तुलसी-पन्थ के विद्रोही साधक हस्तीमल जैन का खुला पत्र

(३९)

मैंने बहु-विज्ञापित इस तेरा-पन्थी साधु-संस्था में वर्षों रहकर जो देखा, सुना, सोचा, समझा—उसे ही जनता तक पहुँचाने का प्रयत्न कर रहा हूं। धर्म के नाम पर किस तरह युवक युवतियों को बहका कर उनकी शक्ति का ह्रास किया जाता है—यही बताने का ध्येय है। अपने को भगवान महावीर समझने का ढोंग रचने वाले आचार्य तुलसी अपने साधु संघ की त्याग-तपस्याओं का मिथ्या विज्ञापन कर जन-साधारण तथा देश के होनहार युवकों-युवतियों को मुक्ति के नाम पर उकसा कर समाज और देश के साथ कितना बड़ा अनर्थ कर रहे हैं-- यही बताने का मेरा उद्देश्य है।

पतनशील साधुत्व

(३६)

एक युग था, जनता मे साधु के प्रति अगाध श्रद्धा थी, जिस
जिस पथ से साधु निकलता, जनता सांस रोके हाथ बान्धे खड़ी
रहती। और आज। आज साधु नाम एक विडम्बना बन चुका है।
आज का साधुत्व आदर का प्रतीक नही, उदारता का आधार हो
गया है। "वह साध्नोति पर कार्याणि इति साधु" न रह कर "आत्म
कार्याणि साधनम्" की पहचान हो गई है। आज का साधुत्व किसी
दुखी पर दया करना, प्यासे को पानी पिलाना, भूखे को भोजन देना
कुपथगामी को सत्पथ पर लाना न होकर, केवल स्वार्थ की पूर्ति का
साधन बन गया है। इसीलिये वह दिनों-दिन पतनशील और
अपेक्षणीय बनता जा रहा है।

मेरे (साधक हस्तीमलजी) ये साधुत्व सम्बन्धी विचार
तेरा-पन्थी साधुओं के साथ दस वर्ष के निरन्तर सहवास की आधार-
भीत्ति पर बने हैं। तेरा-पन्थी साधुओं के विषय मे मुझे काफी
जानकारी है, दस वर्ष तक साधु बन कर इनके साथ रहा हूँ, उनकी
हरेक गति-विधियों और चाल बाजियों का सूक्ष्मतम अध्ययन
किया है।

तुलसीवाद

(३७)

आज के तेरापन्थी साधु,साधु नहीं रहे हैं। जैसे कि महावीर सिद्धान्त के अनुसार होने चाहियें। जैनवाद के अनुरूप साधुत्व से बहुत दूर पड़ गये हैं। आज का यह तेरापन्थी साधु-संघ महावीर का नहीं, आचार्य भिखण का नहीं, तुलसी का है, यहां आचार्य तुलसी की एकतन्त्र हकूमत है, मुनि चम्पा की सामन्त शाही तानां शाही है, मुनि नगराज और माजी महाराज का राजतन्त्र है। इस बीसवी शताब्दी के तेरापन्थी साधु-संघ का संचालन महावीर के आदर्शो पर नहीं, आचार्य तुलसी की स्वार्थ पूर्ण हथकन्डो से हो रहा है। इस तथाकथित साधु-संस्था का आधार महावीरवाद क्या, मैं इसे भिखणवाद भी नहीं मान सकता हूं यह तो तुलसीवाद है और इस तुलसीवाद से विरोध का सचेतन या अचेतन परिणाम केवल व्यक्तिगत स्वामित्व के आधार पर कायम व्यवस्था के विरुद्ध लड़ कर नैतिकता की रक्षा होगी।

मैंने बहुत निकट से तुलसीवाद देखा है, उसका अनुभव किया है, और एक दिन यौवन के आरम्भ में मैं उसमें आकन्ठ डूब गया।

परिवार वालों की समस्त ममता तोड़ कर आचार्य तुलसी के हाथों दीक्षित होकर, बहुविज्ञापित इस साधु-संस्था का एक अंग बन चुका था। पर जैसे जैसे गहरे पानी पैठता गया, रत्न तो क्या, सीप कौड़ियां भी हाथ न लगी। उलटे दुर्गन्धपूर्ण कीचड़ में धंसता गया। शान्ति पूर्ण जीवन बिताने का ढिंढोरा पीटने वाले इन मुनियों को,अशान्त वातावरण में रिस रिस सांस लेते देखा तोअपनी भूल पर रो उठा। एक गुरू की आज्ञा में चलने वाले मुनियों के पारस्परिक व्यवहार ने इनमें फैले भ्रष्टाचार और व्यभिचार ने मेरी आंखें खोलदी और एक दिन मैं भी एक "मुनि"की वासना का शिकार होते होते बचा।

इस तुलसी संघ में मैंने किशोर मुनियों को सिसकते सुना। इनके साथ अप्राकृतिक व्यभिचार होते देखा है, धुरन्धर, शास्त्र मर्मज्ञ कहे जाने वाले "आगीवाणों" को नवदिक्षार्थियों के साथ आत्म पतन करते देखा। किशोर सुकुमारियों के मधुर कटाक्षों से "खलास" होने वाले मुनियों को एकान्त में"चौलपट" धोते देखा है। मैं सा धकार कह सकता हूँ कि संघस्थ प्रत्येक साधु और साध्वी महावीरवाद और जैनत्व से बहुत दूर हैं। जहां तक दैनिक जीवन का प्रश्न है उसके लिये कोई भी साधु महावीर या जिन शासन की शपथ खा कर यह नहीं कह सकता कि आज का दिन मैंने जिन सिद्धान्तों के अनुरूप बिताया है। साधुओं की इस चरित्र हीनता का कारण है उनकी सुस्वादु चटपटे भोजन की लिप्सा और श्रावकों को ज्यादा से ज्यादा प्रभावित करने वाले रहन-सहन अपनाने की वासना। यही कारण है कि आज के

तेरापन्थी साधुवों में गृहस्थों की अपेक्षा ज्यादा बिमारियां पाई जाती हैं। जहाँ "मूजाक" जैसी जघन्य बीमारियां, वह भी तेरापन्थी साधुवों के अधिनायक मे, पाई जाती है। कामोत्तेजक बलवर्धक पाकों और औषधियों का प्रयोग साधुवों के किस सच्चे ध्येय की पूर्ति का प्रतीक है। मकर ध्वज, शिलाजीत का सेवन जहाँ गृहस्थों को भी कामातुर बना देता है, साधु किस उद्देश्य से उसका सेवन करते हैं ? यह सन्देहास्पद है।

तेरापन्थी साधुओ में सर्वथा साधुत्व का अभाव है। यह बात नहीं ? पर अधिकांश साधु सच्चे साधुत्व से दूर हैं। उनमें खान पान की लोलुपता इतनी अधिक है कि वे तरमाल के बिना किसी के घर से आहार लाना पसन्द नहीं करते। जहां स्वादिष्ट, चटपटा भोजन उन्हें उपलब्ध होता है वहीं से वे अपनी पात्रियां भर लेते हैं! वह कहने के लिये "गोचरी" है, पर है गधाचरी से बढ़कर। उनका वह भोजन सात्विकता नहीं, राजसिक भी नहीं, पूरा तामसिक होता है। वीर्य विघातक पदार्थ मोर्च, गर्म मसाले, लहसन, प्याज, अमचूर, आदि से मिश्रित साग-सब्जियां ही उन्हें रूचिकर लगती हैं। मिठाइयों से कोई पथ्य नहीं रखा जाता। साधारण श्रावक के घर का बना सात्विक भोजन, वे लेना नहीं चाहते हैं। यही नहीं, अपने शारीरिक बनाव-श्रृंगार को भी उन मे खूब चिन्ता रहती है। पंचमी के लिये खूब पानी ले लिया जाता है, पंचमी क्रिया से अवशिष्ट पानी से हाथ, मुँह, नाक, कान, आदि खूब मल-मलकर धोये जाते हैं। वहीं छिपकर

सोडा-साबुन आदि क्षारों का प्रयोग किया जाता है। चेहरे को चमकाने के लिये घी, वैसलीन आदि स्निग्ध पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। जिससे चेहरे पर चमक मालूम हो, लोग उन्हें ब्रह्मचारी समझे?

जहां ब्रह्मचारी के लिये शृंगारिक प्रसाधनों से बचे रहने का विधान है, वहां तेरापन्थी साधु यह सब लुक छिप कर करते हैं। "पायरिया" के नाम से मन्जन किया जाता है। आंखे जलने के बहाने अंजन किया जाता है। भोजन में लाये घी से सिर के केश चुपड़े जाते हैं। साधुत्व अपना कर भी छैलापन निभाया जाता है। तेरापन्थ के संस्थापक श्री भीखण जी ने जहां नारी को" कूड़ कपट नी कोथली, अवगुण नो भन्डार" कहा है, आज उसी के कर्णधार उन स्त्रियों के झुन्ड में बैठ कर उनसे घर-गृहस्थी की बातें मुलक मुलक कर पूछते हैं। भोली नारी धर्म के नाम पर साधुजी को सर्वस्व तक सौंपने को तैयार हो जाती है, इस प्रकार के प्रेम कान्ड का उद्घाटन हो भी जाता है तो विगय टाल कर, मूत परठ कर, प्रायश्चित कर या पैसे और प्रभाव के द्वारा दबा दिये जाते है।

बखाण-श्रृंगार का श्रोत

(३८)

इन तेरापन्थी साधुओं के बखाण भी बड़े आकर्षक होते हैं। बखाण (व्याख्यान) के नाम पर दुनियां भर के श्रृंगार का वर्णन किया जाता है। नारी के रूप-सौन्दर्य का वर्णन इतना सजीव होता है कि उसके सामने काम-शास्त्र के पृष्ट भी फीके जान पड़ने लगते हैं। नारी के नेत्र, कपोल, कुच, कटि, उरजादि के श्रृंगारिक वर्णन का ढंग इनका अपना होता है। कहने को वह नारी-निन्दा की जाती है पर उसका इतना मोहक वर्णन किया जाता है कि श्रोता स्वतः बखाणों में बैठी सुन्दर सुन्दर महीन वस्त्रों और सोने मोती से सजी नारी को निहारने लगता है। और बोल उठता है- "टैत बचन, घणी खम्मा अन्नदाता" साधुजी पुलकित होकर बखाण को और अधिक श्रृंगारिक बना देते हैं। इन सब का प्रभाव साधु नामधारी द्रव्य लिंगीयों के जीवन पर काफी पड़ता है। बहुत से साधु अप्राकृतिक व्यभिचारों के चंगुल में फंस जाते हैं। प्रति वर्ष ऐसी दो चार घटनायें तुलसी के लोह आवरण से निकल कर जनता तक पहुँच ही जाती हैं। बचपन

में साधुओं के अप्राकृतिक अत्याचारों के शिकार बुढापे में उसी आदत से लाचार साधु फिर तो मूर्ख लोगों को बहकाकर अपनी लत पूरी करवाते हैं।

संवत २००६ में छापर में चातुर्मास करने वाला एक साधु इसी प्रकार गुदा-मैथुन करवाता पकड़ा गया, पर आचार्य तुलसी जी ने श्रावकों के शिकायत करने पर भी कोई ध्यान नहीं दिया।

तेरा-पन्थ के एकछत्र सम्राट किसी शिकायत पर तभी ध्यान देते हैं, जबकि किसी घटना को दबा देना अपनी हस्ती के बाहर हो जाता है। आचार्य स्वयं भी तो इस भ्रष्टाचार से पृथक नहीं हैं। २०१० के चातुर्मास से पहले वे भी "सिफलिस" के शिकार हो चुके हैं। कामना-पूर्ण व्याख्यानों का प्रभाव श्रावक और श्राविकाओं पर काफी पड़ता है। पिछले वर्ष नोखा मण्डी में बखाणों की छाया में जो प्रेम-काण्ड घटित हुआ, वह उसके प्रभाव का सूचक है। साथ २ साधुओं में फैले व्यभिचार का भी प्रतीक है। अपने को भगवान् महावीर से किसी भी हालत में कम न समझने वाले साधुओं के दर्शन, उनकी उदारवाणी के श्रवण एवं उनके पावन चरणों के स्पर्श से मानसिक विचारों की क्षणिक शुद्धि भी न हो, यह तर्क के बाहर की चीज है। यह कितनी लज्जा जनक स्थिति है कि साधुओं के पावन दर्शन के धर्म-लाभ के लिये जाने वाले श्रावक और श्राविकाएं साधुओं के प्रभाव स्थल में ही अपनी काम-वासना शांत करते पकड़े जाते हैं।

महात्माओं के दर्शन का और लाभ ही क्या मिला ? यही नहीं, ऐसी प्रेम लीलाओं के संयोजन में साधुओं का भी सहयोग रहता है। श्रावक साधु दोनों मिल कर ही संकेत स्थानों का निर्णय करते हैं। और उस वैतरणी में डुबकियां लगाकर दोनों ही अपने को कृतार्थ करते हैं। प्रेमकान्ड का उद्घाटन होने पर श्रावक अपने मत्थे ले कर साधुजी को बचा लेता है।

कई वर्षों पहले ऐसे ही एक प्रेम-कान्ड का उद्घाटन होते होते रह गया। दोनों ओर के प्रेम-पत्र बीच में ही उड़ा कर पोस्ट मैन ने हजारों रु० ऐन्ठे और नायिका को अपनी अंकशायिका बनाया। इस प्रेम-कान्ड का मुख्य सूत्रधार तेरापन्थी साधु शक्तिमल था। जिनके प्रवचनों की सारे श्रावक समाज में धूम थी। जिनके मोहक स्वर पर सभी मुग्ध थे। जिन्होंने सरदार शहर, छापर, पड़िहारा के कुछ धनिक श्रावकों के सहयोग से कई नारियों के नारित्व से खिलवाड़ किया। पर प्रकट में न आ सके। प्रकट में आने का अवसर आया तो पैसे का बल और उसी नारी के प्यार के छल से उड़ाये गये सभी पत्र वापिस हाथ पा लिये गये। वर्षों रंगरेलियां करते रहने पर भी शक्तिमल वैसा ही साधु संघ में प्रतिष्ठित बना रहा। बीसों वर्षों तक प्रकट रूप में जनता को संयम का उपदेश देते रहे और स्वयं व्यभिचार की वैतरणी में तैरने का आनन्द लूटते रहे।

इस अनर्थ का अन्तिम पटाक्षेप, चम्पालाल साधु से मनमुटाव होने पर हुवा।

श्रावक समाज की बहु-बेटियों से खिलवाड़ करने वाला वह राक्षस सदा ब्रह्मचारी कहलाया। आज भी शक्तिमल से पचासों साधु तेरापन्थ में हैं। वे वैसे ही घृणित कृत्य करते हैं और अन्ध भक्तों से पूजे जाते हैं।

ये मानव रूपधारी पिशाच समाज की बहु-बेटियों से ही नहीं, जाति के नौनिहालों, समाज के कर्णधारों देश के भावी आधारों के साथ भी कुत्सित कार्य करते नहीं सकुचाते। रात को वखाण बांचते समय अनेक बालकों को ठगा जाता है। नई उम्र के गोरे मुख के बालकों को मुनि महाराज (?) अपने पास बैठा कर बहकाते हैं। अन्धेरी रात में उनके हरेक अंगों का स्पर्श करके "तैयार" किया जाता है। धीरे धीरे .. . । एकान्त सेवा का लोभ दिखा कर उनसे अप्राकृतिक व्यभिचार किया जाता है।

तुलसी को तिलान्जली

(३८)

उपरोक्त विचार साधक श्री हस्तीमलजी के हैं । यह बातें अधिकांश सच्ची हैं । साधकजी ने दस वर्ष तक इस संघ मपूर्ण संस्था का अनुभव किया था । अन्त में इस दोषपूर्ण संस्था से आपको अलग होना पड़ा । बाहर निकलने पर आपको काफी कष्टों का सामना करना पड़ा । खाने को दो जून रोटी मिलनी मुश्किल हो गई । हरेक अन्ध-भक्त, तेरापन्थी आपसे घृणा करने लगा । अब भी करते हैं । इस तेरापन्थ संघ में रहते जो व्यक्ति आपकी चरणरज लेकर अपने को कृतार्थ समझता वही अलग होने पर आपका दुश्मन बन गया । पून्जीपतियों द्वारा इतने अत्याचार करवाये गये कि अन्त में थली प्रांत (राजस्थान का एक भाग) को छोड़कर आपको पूज्य विनोबा भावे के पास जाना पड़ा ।

परन्तु हमें गर्व है आप आज भी देश सेवा करते हुवे अपने साधुत्व को अक्षुण्ण बनाये हुवे हैं । कम से कम दिन-रात अपना आत्म पतन करने वाली और देश एवं समाज के साथ गद्दारी करने

वाले आज के तेरापन्थी साधुओं से लाख दर्जे अच्छे और उत्तम हैं ।

पाठकों को विश्वास दिलाने के लिये ही साधकजी के तेरापन्थ सम्बन्धित विचार प्रकाशित किये गये हैं । आप हमारी बातों पर यका-यक विश्वास नहीं करेंगे, परन्तु श्री तुलसीजी की छत्रछाया में वर्षों रहे हुए तेरापन्थी साधुवों की बातें तो माननी ही पड़ेगी । केवल माननी ही नहीं, सीखनी और समझनी होगी ।

और

तेरापन्थ की ओछी हरकतों से मुकाबला करना होगा ।

कच्ची नींव

(४०)

अब आप तेरापन्थ सम्प्रदाय से सम्बन्ध विच्छेद करने वाले मुनि श्री चम्पालालजी महाराज के भी विचार जान लीजिये । आज से लगभग ३१ वर्ष पहले तेरापन्थ के आठवें सत्ताधीश श्री कालूरामजी महाराज से आपने दिक्षा ली थी । आप अच्छे जानकार, शास्त्रज्ञ और आलोचक हैं । तेरापन्थ के साधुत्व काल में भी आप श्रावकों एवं साधुओं की कमजोरियों के बाबत निर्भीक रूप से फटकारते रहते थे । जैन धर्म के कट्टर प्रचारक होने के कारण आज तक २४-२५ हजार मील पैदल यात्रा कर चुके हैं । गत ३१ वर्षों में आपने लगभग ८ हजार व्यक्तियों को जैनी बनाया था ।

मुनि श्री चम्पालालजी सम्वत २००५ से आचार्य श्री तुलसी का जबरदस्त विरोध कर रहे हैं । संघ में रहते हुये, आप बार २ आचार्य श्री तुलसी को चुनोती दे रहे हैं कि उनके प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दें और अपने कामों को शास्त्रानुकूल प्रमाणित करें । लेकिन श्री तुलसी के पास रटा-रटाया केवल वही उत्तर है ?

"गुरु पर श्रद्धा रखो ?"

सम्वत २००६ में सरदारशहर में इन प्रश्नों को आपने पुनः दोह्-राया। यह सुन कर श्री तुलसी नाराज हो गये और अपने विशेषा-धिकार से सावद्य प्रवृतियों को 'निर्वद्य होने की घोषणा कर दी। आपने कहा— सब लोग मुझ पर आस्था रखें, मैं जो भी कर रहा हूं वह ठीक है । इस नाटक का आप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । मन ने प्रबल विरोध किया । गहरे मनन और अध्ययन से पुनः अपनी शंकाओं को मिलाया । आपको आचार्य श्री के सारे कार्य शास्त्र विरुद्ध नजर आये । अतः अपनी आत्मा को धोखा देना बुरा समझकर, गत फाल्गुन वदी ४ सम्वत २०१० में राणावास में आचार्य श्री तुलसी के सम्प्रदाय से अलग हो गये।

३१ वर्ष तक जो व्यक्ति तेरापन्थी साधु-सङ्घ मे रहा हो। और जिस व्यक्ति ने अपने समय का वास्तविक सदुपयोग किया हो । यही नहीं तेरापन्थ श्रावक समाज में जिसकी काफी धाक और प्रतिष्ठा हो, उस पर यकायक अविश्वास नहीं किया जा सकता।

आज भी तेरापन्थी छिपे २ मुनि श्री चम्पालालजी की वन्दना करते नहीं सकुचाते। अतः इस प्रौढ़ और समझदार साधू की अवहे-लना नहीं की जा सकती।

श्री मुनि चम्पालालजी अकेले हैं। अपने जीवन की शुद्ध क्रिया पालन कर रहे हैं। इन्हें आशा है, एक दिन सत्य की जीत होगी। आपका भावी कार्यक्रम तेरापन्थ में परिवर्तन लाने में प्रयत्नशील हैं। हमें तो हमारे तेरापन्थी भाइयों से यही आशा है, इस अनुभवी सन्त को झूठा समझने का प्रयत्न नहीं किया जावेगा।

न देखा, न सुना ?

आचार्य श्री तुलसी बम्बई में जिस मकान मे ठहरे हैं वह किराये पर लिया हुवा है। चूंकि जैन साधु अपने लिये किराये के मकान का उपयोग नहीं कर सकते अत अपने अनुयायियों द्वारा यह खबर फैलाई गई है कि किराया कमरों का नहीं दिया जाता अपितु सामने की खुली जगह का दिया जाता है।

हमने आज तक यही देखा, सुना था कि कमरे के साथ खुली जगह या बरामदा मुफ्त मिलता है। शायद तुलसीजी तो दुनियाँ को बिल्कुल गवार समझते हैं। खैर जो आज तक न हुवा, वह तुलसीजी ने कर दिखाया।

श्री चम्पालाल जी महाराज का बीकानेर में दिये गये एक प्रवचन का सार

(४१)

श्री चम्पालाल जी महाराज ने बताया कि आचार्य श्री तुलसी से मेरा पहला प्रश्न अणुव्रती संघ की स्थापना के विषय में था। क्यों कि अणुव्रती नाम श्रावक का है। और श्रावक चार तीर्थों मे एक है। और तीर्थ का संस्थापक तीर्थंकर भगवान के अलावा अन्य कोई नहीं हो सकता। अब यदि अणुव्रती संघ का संस्थापक कोई साधु या आचार्य बन बैठता है तो उसे मिथ्याचारी या उत्सूत्र परुपक समझना चाहिये या नहीं। इतना ही नही, इस कथित अणुव्रती संघ के विधानानुसार तो किसी अजैन और मिथ्यात्वी को भी अणुव्रती बनाया जा सकता है। इससे बढ़कर और क्या शास्त्र विरुद्ध काम होगा ?

भगवान तो कहते हैं कि सम्यक ज्ञान, दर्शन, चारित्र बिना अणुव्रती और महाव्रती बन ही नहीं सकते। और इधर हमारे आचार्य श्री मिथ्यात्वी को भी अणुव्रती बना रहे हैं। यहां नही

गृहस्थों के लिये मर्यादाऐं बान्ध कर (आगार रख कर) विधान बनाना तथा गृहस्थों पर अनुशासन रखना आदि सारी प्रवृतियां शास्त्र विरुद्ध हैं। और सावद्य प्रवृति है। इन सारी बातों का प्रचार तो जैन धर्म के नाम को ही मिटाने वाला सिद्ध हो चुका है। अगर किसी को शंका हो तो अणुव्रत संघ की विधान पुस्तिका को देखलें। उसी से पता चल जावेगा कि जैन सिद्धान्तों के मूल पर कितने कुठाराघात किये गये हैं।

तेरापन्थ के वयोवृद्ध मुनि श्री रंगलाल जी का हवाला देते हुवे आपने कहा कि उन्होंने पचासों सन्तों के बीच खड़े होकर, अनन्त सिद्धो की साक्षी से कहा था कि आचाय श्री तुलसी के सारे काम सावद्य है। अतः इन्हें छोड़ देना चाहिये। परन्तु तानाशाह तुलसी किसी की नही सुनते।

अपने दूसरे प्रश्न पर प्रकाश डालते हुवे मुनि श्री ने फरमाया कि गृहस्थों से सन्देश लिखवाना भी सावद्य प्रवृति है। इस सिल-सिले मे कांग्रेस के चोटी के नेता और भारत सरकार के कतिपय सर्वोच्च पदाधिकारियों से चलता रहने वाला पत्र व्यवहार पढकर सुनाया।

तीसरा प्रश्न तस्वीर उतारने के विषय में तथा चौथा गृहस्थो की सभा का साधु नेतृत्व कर सकता है अथवा नहीं?

★

परमार्थिक शिक्षण संस्था
या
चलता फिरता होटल !

(४१)

परमार्थिक शिक्षण संस्था के बारे में बोलते हुए मुनि श्री ने कहा कि इस संस्था की स्थापना का मूल उद्देश्य यही है—आचार्य श्री के विहार के समय ठहरने और आहार-पानी की व्यवस्था होती रहे। क्योंकि इस संस्था के लगभग सब सदस्य तुलसी जी की विहार-सेवा के बहाने साथ ही रहते हैं। इस संस्था का खर्चा गांव २ से चन्दा कर के चलाया जाता है। इससे बढ़कर और क्या सावद्य प्रवृति हो सकती है और सावद्य प्रवृति-को चालू करने वालों को जैन साधु कैसे माना जा सकता है।

तुलसी जी की गति

(४३)

महा निशीथ सूत्र के पांचवें अध्ययन में कमलप्रभा नाम के महा-धुरन्धर जैनाचार्य का उल्लेख है, जिन्होंने जिन शासन की सेवा प्रभावना करके तीर्थंकर गोत्र उपार्जन कर लिया था। परन्तु अन्त में मिथ्याभिमान के वशीभूत होकर स्त्री के स्पर्श होने में कोई दोष नहीं है, सिर्फ इतनी सी थाप देने से नरक-निगोद में गोता खाया था और बहुत काल तक इस संसार में परिभ्रमण किया था। तब आप ही सोचिए, सैकड़ों दोषों की स्थापना करने वाले हमारे आचार्य श्री की क्या गति होगी।

मुझे तो ऐसा लगता है, अपनी यश-कीर्ति के लिये कोई भी पाप करने में संकोच न करने वाले हमारे आचार्य श्री महापुरुष–जीव तो नहीं हैं ?

धिक्कार

(४४)

इधर कुछ दिनों से दया-दान सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर जो हमारे आचार्य श्री तुलसी देने लगे हैं, उन्हें देखकर तो बड़े २ कूट-नीतिज्ञों को भी मात खानी पड़ती है। दया-दान के विषय में तेरा-पन्थ की खुले शब्दों में एकान्त पाप की मान्यता है। जिसे सारे जैनी जानते हैं। इस बात को छिपा कर लोगों को धोखे में डालने के लिये, एकान्त पाप की मान्यता रखते हुए भी "लौकिक धर्म" आदि कह कर बहका देते हैं। यह प्रत्यक्ष मिश्र और शंकर भाषा है। ऐसी भाषा बोलने वाले महा-मोहनीय कर्म उपार्जन करते हैं। और ऐसे झूठ बोलने वाले को "आचार्य" आदि सात पदवियों में से कोई भी लागू नहीं हो सकती। पदवियां तो बहुत दूर की बात है, एवं मिथ्यात्वियों में तो साधुत्व और सम्यक दृष्टित्व भी नहीं रह सकता। परन्तु जो जैन शास्त्रों के ज्ञाता नहीं है, वे बेचारे भोले लोग इन कपट जालियों के फन्दे में फंसे हुवे कुराह रहे हैं। परन्तु कहा है जैन शास्त्रों के ज्ञाता ऐसे श्रावक जिन्होंने अ गार मर्दन जैसे कपट जालिये

का भण्डाफोड़ करके उसे अभक्ष्य करार दिया था और जैन धर्म की रक्षा की थी। .... परन्तु आज वैसे श्रावक नहीं हैं। जब ही तो जैन धर्म के नाम से टुकड़ा खाने वाले ही अपने नाम और यश लोलुपता के वशीभूत होकर जैन धर्म का नाम मिटाने का प्रयास कर रहे हैं। फिर ऐसे जैन धर्म के उत्थापकों को जैन साधु मानते हैं। यही नहीं, उल्टे तेरा-पन्थी अन्ध भक्त तुलसी के गलत कार्यों का समर्थन करते हैं। धिक्कार है, ऐसे साधुओं एवं श्रावकों को-जिन्होंने "टुकड़ों" के लिये अपनी आत्मा को बेच दिया है।

परन्तु भगवान के वचन तो निश्चय ही सत्य हैं!

जैन धर्म मानव धर्म है

श्री चम्पालाल जी महाराज ने यह भी बताया कि जैन धर्म
लोकोत्तर धर्म है। इस धर्म का विधान जिनेश्वर देवों ने केवल आत्म
कल्याण के लिये ही किया है। ऐसे पवित्र-मानव धर्म को अनेक स्वार्थी
लोगों ने अपने एहिक स्वार्थ की सिद्धी के लिये छोड़ दिया हैं, और
लौकिक पचड़ों मे पड़ गये हैं। ऐसे मूर्खों को इसभव और परभव
मे महान नरकादिक का दुःख भोगना पड़ेगा। मैं तो यहां तक
कहूँगा— जो कोई अपने सांसारिक सुख-सुविधा प्राप्त करने की भावना
से धर्म करते हैं, उन्होंने सच्चे धर्म को जाना ही नही है। और न ऐसे
लोग साधु और श्रावक कहलाने के हकदार ही हैं इस वास्ते प्राणी
मात्र को अपने आत्म-कल्याण के लिये धर्म का आचरण करना
चाहिये।

उदाहरण

(४६)

साधक श्री हस्तमल जी ने तेरापन्थ में दस वर्ष तक रह कर जो कुछ तेरापन्थ में देखा, उसे हुबहु समझाने का प्रयत्न किया है। श्री चम्पालाल जी महाराज भी तेरापन्थ मे फैली अव्यवस्था, बन्नमासियां आदि को जानते हैं। परन्तु हम केवल इनके जैन और तेरापन्थ के शास्त्रों के विचार प्रकाशित कर रहे हैं। उक्त उदाहरणों से प्रमाणित हो जाता है, तेरापन्थी जैनी नहीं हैं। सफेद कपड़े पहन कर, स्वांग रचना महापाप है। कई पाठक पूछते हैं, आपकी उम्र बहुत कम है, आप तेरापन्थ के बारे में क्या जानते हैं? है भी ठीक। लेकिन जो जानता हूं, यह बहुत है। तेरापन्थ के विषय में और अधिक जान कर समय खराब करना मुझे पसन्द नहीं है। मैने जो कुछ लिखा है अपने अनुभव के आधार पर लिखा है। यह जरूर है, कि जवानी और भावुकता का गहरा सम्बन्ध है। परन्तु यह पुष्टी मुनि श्री चम्पालाल जी का ३१ वर्षीय तेरापन्थ साधुत्व कर देता है।

रोटी उल्टी खाइये या सीधी। तरह और ताकत तो एक जैसी

है। ठीक इसी प्रकार मेरी बात मानिये अथवा नहीं, लेकिन तेरापन्थ का असली रूप ठीक इसी प्रकार का है। इसमें सन्देह और शंका करने की कतई गुंजाइश नहीं है।

जैन धर्म और तेरापंथ

(४७)

मेरी जैन धर्म पर इतनी ही आस्था है कि एक जैन परिवार में पैदा हुवा। कुछ लोग ईर्ष्या या कौतुहल वश मुझे " भिखण जी का अवतार " कह कर चिढ़ाने का निरर्थक प्रयत्न करते हैं। कहते हैं श्री भिखण जी ने स्थानक-वासी सम्प्रदाय की शिथिलता देख कर अलग हुवे थे। इसी तेरापन्थ की शिथिलता का मैं कट्टर विरोधी समझा जाता हूँ। परन्तु स्थानकवासी सम्प्रदाय की कमजोरी और कमी का हमें आज तक पता नहीं पड़ा। अगर भिखणजी को कमजोरी मालूम हुई होती तो वे कभी अलग नहीं हो सकते थे। कारण भी है— भीखण जी के असाधारण व्यक्तित्व के प्रभाव से सब झूठी बातों का तेरापन्थियों पर असर पड़ा तो कम से कम सच्ची बातों का स्थानक वासी सम्प्रदाय पर जरूर असर पड़ता। लेकिन अलग होना था, और हो गये। अब प्रश्न है "भीखण जी के अवतार" का। मैं तो कभी अपने आपको तेरापन्थ से अलग नहीं समझा। मैं पूर्ण रूप से बहिष्कार भी तो नहीं कर सकता। जैसा कि मैंने भूमिका में लिखा

है, जीवन पर्यन्त तेरापन्थ सुधार के लिये प्रयत्न करता रहूँगा । इस मिठी चाह की आशा लगाये — मै अपने सुनहरे भविष्य की कल्पना कर रहा हूँ । मुझे विश्वास है, तुलसी जी को परिवर्तन करना होगा । जमाना करा देगा । और यही मेरी जीत और अन्तिम चाह है ।

जैन धर्म को मैंने मानव धर्म के रूप मे पाया है । और तेरापन्थ के बारे में भी कल तक यही विचार थे । लेकिन ज्यों २ उमर बढ़ी, सोचने और समझने की ताकत बढ़ी, तेरापन्थ मेरे मन से उतरता गया । मुझे खेद है आचार्य श्री तुलसी की श्रद्धा का मन्त्र मुझ पर असर नहीं कर सका ।

उस समय श्री भिखणजी आदि कुल तेरा सन्त थे। अत. अपने नये पन्थ का नाम "तेरापन्थ" रखा।

तुलसी जी का "तेरा" का अर्थ "भगवान्" सरासर गलत है। मारवाड़ी भाषा में "तेरा" का अर्थ १३ होता है। अगर श्री भिखणजी, जो पूरे मारवाड़ी थे, तेरा का अर्थ भगवान् से रखना चाहते तो इस पन्थ का नाम "थारा पन्थ रखा जाता। परन्तु उनके "तेरा" का मतलब तो "तेरह" से था। यही कारण है, तेरापन्थ नाम रखा गया। परन्तु श्री तुलसी जी जनता को भ्रम में डालने के लिये उल्टा अर्थ करते हैं। यह एक मिश्र भाषा है। और इस प्रकार के वहमी शब्द प्रयोग करने वालों को जैनाचार्य तो अलग केवल साधु भी नहीं कहा जा सकता।

प्रत्येक पन्थ या सम्प्रदाय का नाम ही उसकी जड़ है। और जब नाम भी इस प्रकार का भ्रम पूर्ण है तो पन्थ को कैसे सच्चा समझा जा सकता है?

विशेष वर्ग पहेली

संकेत आचार्य श्री तुलसी जी बनावेंगे ?

(90)

इस वर्ग पहेली में आपके महा-पवित्र तेरापन्थी साधु-सतियों के नाम हैं। ऐसे लुच्चे लफंगों की हमे जरूरत नहीं हैं। हम चाहते है इन्हें अति शीघ्र संघ से बहिष्कृत किया जावे। अगर आपने इस पहेली को हल नहीं किया तो "आवारे की श्रद्धांजली" मे प्रमाण और विवेचन सहित मुझे हल करनी पड़ेगी। आपके लिये यह कोई बड़ी समस्या नहीं हैं। आशा है शीघ्र परिणाम मिलेगा।

स	कें	प	ति	ब	न	ने	कां	तै	या	री	मे
	म		×	३	ह	न	ला		×	४ ढु	ो
	न	म		×	६	ज	रा		×	७ ो	थ
व			ल	×	९ सो		न	ला		×	×
त	र	म		×	×	×	११ न		ा	ज	×
१२ ा	रा	च		×	×	१३ प	न्	ा		×	[illegible]
स्या	ला		×	१५ बु				×	१६ क	है	[illegible]
ल	तां				×	१८	ख	ा	ल	×	[illegible]

पिछले पृष्ठ की पहेली का शेष

×	१६ मि	र				×	×	×	२०	ग	
२१ ो		न	×	२२ बृ	द्धी			×	२३ सो		
२४ मि		प			×	×	२५ को			ल	×
२६	म	च		दू	ग	ड़	×	२७ भू	म		×
×	×	२८ श्री	ज	य					छा	प	र
२९	म	र	डु	ग	र	ग	ढ	×	३० ो	थ	
३१	थ	म		ग	ह	वों	र	×	३२ ग	णे	
३३ मां			ल	×	२४ पू	न		च		×	×
३५ मी	सु	पा			म	ल	जी	स्वा	मी	जी	×
६	द	य	च		×	३७	म्या			×	×

सत्तियां जी महाराज !

१ आ		जी	×	२	न्द	कु		
३ के			जी	×	४	खु	जी	×
५ लि				×	६	न्द		जी
७ प		जी	×	८	तु		×	×
९	लु	जी	×	१० त		सु		जी
११ गु			जी	×	१२		श्री	जी
१३ मौ			जी	×	×	१४ जा	७	जी

ऊपर ३७ तेरापन्थी वाल विरम चोर साधुओं एवं १४ मोटी-मोटी महा सत्यानासिनियों के नाम दिये जा रहे हैं। इन के काले-कारनामों से जनता तो परिचित है ही, श्री तुलसी जी भी इन्हें अच्छी प्रकार से जानते हैं। ऐसे और भी कई साधु-सत्तियांजी हैं, जो तेरापन्थ समाज के लिये मिठा जहर हैं। हम चाहते थे, खुल्लम-खुला पूरे प्रमाण सहित उक्त ..... का परिचय छापा जावे। लेकिन इस वास्ते नहीं छाप रहे हैं कि जनता यह न समझे, हम ईर्ष्यावश तेरापन्थ का विरोध कर रहे हैं। अतः "सांकेतिक विरोध" इस पुस्तक में किया जा रहा है। अगर तुलसी जी ने अपने दल से उक्त

साधु-सन्तो को अलग नही किया तो अगली पुस्तकों में पूरी तरह से भन्डा फोड़ करना होगा। यह हमारे लिये भी शर्म का विषय है कि जैनधर्म जैसे पवित्र और नैतिक प्रचारक धर्म में ऐसे नीच साधु आश्रय पा रहे हैं।

उक्त नामों में से चार आचारे सा‍धु निकल भी चुके हैं। परन्तु शेष भी निकलने चाहिये। किसी भी सम्प्रदाय में ऐसे वासनात्मक, ठग साधुओं को स्थान नहीं मिलना चाहिये।

आज का तेरा पन्थ

सूचना

● कई मित्र इस पुस्तक को जल्दी देखना चाहते थे और हमें भी उनके रोष का शिकार बनना उचित नहीं जान पड़ा। अत. २०–३० पृष्ठ की पाट्य-सामग्री इस पुस्तक मे नही छाप सके है। उन सब को "जलते प्रश्न" के तीसरे भाग मे सम्मिलत कर दिया गया है।

—प्रकाशक

एकता ही विजय की प्रतीक है।

श्री ज्ञान मन्दिर, नोहर (राजस्थान)

(संस्थापित : १५ अगस्त १९४७ ई०)

हमारा उद्देश्य

★ अन्ध-विश्वास और सामाजिक अत्याचारों के विरुद्ध प्रबल आंदोलन चलाकर, समाज के सुन्दर भविष्य का निर्माण करना।

★ समाज के प्रति प्रत्येक जैनी को अपना उत्तरदायित्व बता कर, समूचे संसार में जैनत्व का प्रचार करना।

★ पाखण्डी, धोखेबाज और वेशधारी साधुओं का नये वैज्ञानिक तरीके से सुधार या बहिष्कार करना।

इसके अलावा

★ तर्क और मस्तिष्क की प्रतिष्ठा हमारा पहला और अन्तिम काम है।

सोते समाज को जगाने वाली क्रान्तिकारी प्रकाशन संस्था " श्री ज्ञान मन्दिर " को आपका सहयोग अनिवार्य है।

जैन प्रचार योजना

* कार्यक्रम *

(१) एक दैनिक जैन पत्र का प्रकाशन।

(२) कम से कम कीमत या बिना मूल्य जैनसाहित्य वितरण करना।

यह आपके लिये है।

★ एक साथ १०) रु० दीजिये और १५ अगस्त १९५५ तक प्रकाशित होने वाला हमारा पूरा साहित्य मुफ्त पढ़िये। अलग अलग खरीदने पर अन्दाजन १८-२० रु० खरच होगे। अत. इस योजना से प्रत्येक जैनी को लाभ उठाना चाहिये। आज का तेरापन्थ का जिन्होने ३) रु० भेजा है उन्हे ७॥) रु० और भेज देने चाहिये।

★ एक साथ २५) रु० दीजिये और तीसरे वर्ष व्याज सहित ३०) रु० वापिस लीजिये। संस्था का समस्त साहित्य भी ३ वर्ष तक पौने मूल्य में मिलेगा।

★ एक साथ १५१) रु० दीजिये और तीसरे वर्ष व्याज सहित १७५) रु० लीजिये। संस्था का साहित्य भी आधे मूल्य मे मिलेगा।

★ एक साथ ५००) रु० दीजिये और जीवन भर तक मुफ्त साहित्य पढ़िये। ये रुपये दस वर्ष पश्चात वापिस कर दिये जावेगे। लेकिन जीवन भर पुस्तके मुफ्त मिलती रहेंगी।

इस महान योजना मे
आपका सहयोग अनिवार्य है।

पता—श्री ज्ञान मन्दिर,
नोहर (राजस्थान)